अनुक्रमणिका

शुद्धि-पत्रक



पृ.	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	ग्रन्थादो	ग्रन्थादौ
१	१२	श्री महावीम्य	श्री महावीरस्य
३	१४	ध	घ
७	४	घृद्धि	वृद्धि
८	३	यावत्	यावन्
८	२१	धवयवो	धवग्रवो
११	१०	लुक्खो	लुक्खो
१३	१५	म्नोनुस्वार	म्नोरनुस्वार
१३	१६	म्नोरऽनुस्वारो	म्नोरनुस्वारो
१७	१६	असयुक्त	असंयुक्त
३०	७	प्रत्वययोरिति	प्रत्ययंयोरिति
३८	१८	वृध्यावोकारे	वृद्धावोकारे
४४	१७	रूमयो:	रुभयो:
४५	९	विहारामि	विहरामि
४६	२	रूभयो:	रुभयो:
४६	२१	तुव्भं	तुब्भं
४८	८	माला इहिंतो	माला + इहिंतो
५१	१४	वहुलंमि	बहुलंमि

॥ श्री महावीराय नमः ॥

प्रस्तावना ।



जैन आगमों की भाषा के विषय में कितने ही समय से विद्वत्समाज में मतभेद पड़ा हुआ है। कुछ समय पूर्व समाचार पत्रों में इस विषय की चर्चा भी चली थी। एक पक्ष का कहना था कि आगमों की भाषा प्राकृत है। जबकि अन्य पक्ष का कथन था कि आगमों की भाषा अर्ध-मागधी है।

वस्तुतः संस्कृतातिरिक्त समस्त भाषायें प्राकृत ही कही जाती थीं। अतः प्रथम पक्ष की मान्यता भी निस्सार न थी। परन्तु "प्राकृत" यह शब्द संस्कृतातिरिक्त समस्त भाषाओं के लिए सामान्य शब्द है। पाली, शौरसेनी, अपभ्रंश आदि समस्त भाषाओं का समावेश प्राकृत में ही है। श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने अपने स्वयं निर्माणित "प्राकृत व्याकरण" में अपभ्रंशादि छहों ही भेदों को प्राकृत में सम्मिलित किया है, तथैव छहों ही के लक्षणादि का प्रतिपादन किया है। परन्तु हां, विशेष नाम छहों ही भाषाओं के भिन्न २ हैं। जैनागमों की भाषा का विशेष नाम प्राकृत नहीं परन्तु अर्धमागधी है। जिस प्रकार कि बौद्धों का आगम साहित्य पाली भाषा में है, उसी प्रकार जैन आगम साहित्य अर्धमागधी भाषा में है। कारण कि तीर्थंकर भगवान् अर्धमागधी भाषा में ही उपदेश देते थे तथा गणधर उसी भाषा में सूत्र ग्रथित करते थे।

जैनागमों में मुख्यतया द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग, धर्मकथानुयोग तथा चरणकरणानुयोग अर्थात् तत्वज्ञान, गणितज्ञान, महापुरुषों के चरित्र तथा आचार विचार सम्बन्धी विषय वर्णित किये गये हैं। तथैव इन सबका उद्देश्य मोक्षसाधन ही है। परन्तु वह भाषा जानने में न आवे तब तक विषय की यथार्थता एवं महत्वता समझ में नहीं आ सकती।

किसी भी भाषा के साहित्य का ज्ञान प्राप्त करना हो तो उस भाषा का व्याकरण तथा कोष इन दोनों अंगों का ज्ञान प्राप्त करना परमावश्यक है। जैन आगमों पर भाष्य, निर्युक्ति, चूर्णिका, दीपिका, टीका बालावबोध टवा आदि रचे गये, एवं पृथक् पृथक् भाषाओं में भाषान्तर भी हुवे। परन्तु उस भाषा को साक्षात् समझने के लिये जो व्याकरण और कोष की कमी थी, वह ज्यों की त्यों बनी रही।

श्री हेमचन्द्राचार्य जी तथा चण्ड ने व्याकरण बनाये परन्तु प्राकृत भाषा तथा महाराष्ट्रीय प्राकृत भाषा के। अर्धमागधी का नहीं। जैन साहित्य क्षेत्र में इस त्रुटि को पूर्ण करने के लिये भारत रत्न शतावधानी श्रीरत्नचन्द्रजी, महाराज ने कितने ही वर्षों से प्रयत्न किया। सात वर्ष पर्यन्त सतत् परिश्रम द्वारा अर्धमागधी कोष तैयार किया एवं तदन्तर ही व्याकरण बनाना प्रारम्भ किया। बीकानेर निवासी श्रीयुत अगरचन्द्रजी भैरोंदानजी सेठिया की हार्दिक सहानुभूति से "जैन सिद्धान्त कौमुदी" नामक अर्धमागधी व्याकरण उन्होंने स्वकीय प्रेस में छपाया। कितने ही जिज्ञासुओं की यह

स्वर्गीय बन्धु रा० ब० श्री चांदमलजी नाहर के स्मरणार्थ भेंट.

श्रीमहावीराय नमः

श्री तत्त्वदीपिकाव्याख्यासमेता

जैनसिद्धान्तकौमुदी

[अर्धमागधीव्याकरणम्]

पूर्वार्द्ध-अव्ययपर्यन्तम्

रचयिता—

भारत रत्न शतावधानी पण्डित मुनि श्री रत्नचन्द्रजी महाराज

प्रकाशक—

बरेलीनिवासी श्री० नगराजजी नाहर, मु० जयपुर

प्राप्तिस्थान—श्री जैन गुरुकुल, ब्यावर (राजपूताना)

प्रथमावृत्ति १०००

अमूल्य

विक्रमाब्द १९९२
वीराब्द २४६१

अनुक्रमणिका

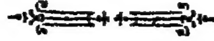
शुद्धि-पत्रक



पृ.	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	ग्रन्थादो	ग्रन्थादौ
१	१२	श्री महावीस्य	श्री महावीरस्य
३	१४	ध	घ
७	४	घृद्धि	वृद्धि
८	३	यावत्	यावन्
८	२१	यवयबो	यवयवो
११	१०	लुक्खो	लुक्खो
१३	१५	म्नोंतुस्वार	म्नोरनुस्वार
१३	१६	म्नोरऽनुस्वारो	म्नोरनुस्वारो
१७	१६	असयुक्त	असंयुक्त
३०	७	प्रत्वययोरिति	प्रत्यययोरिति
३८	१८	वृध्यावोकारे	वृद्धावोकारे
४४	१७	रूभयोः	रुभयोः
४५	९	विहारामि	विहरामि
४६	२	रूभयोः	रुभयोः
४६	२१	तुब्भं	तुब्भं
४८	८	माला इहिंतो	माला + इहिंतो
५१	१४	वहुलंमि	बहुलंमि

॥ श्री महावीराय नमः ॥

प्रस्तावना।





जैन आगमों की भाषा के विषय में कितने ही समय से विद्वत्समाज में मतभेद पड़ा हुआ है। कुछ समय पूर्व समाचार पत्रों में इस विषय की चर्चा भी चली थी। एक पक्ष का कहना था कि आगमों की भाषा प्राकृत है। जबकि अन्य पक्ष का कथन था कि आगमों की भाषा अर्ध-मागधी है।

वस्तुतः संस्कृतातिरिक्त समस्त भाषायें प्राकृत ही कही जाती थीं। अतः प्रथम पक्ष की मान्यता भी निस्सार न थी। परन्तु "प्राकृत" यह शब्द संस्कृतातिरिक्त समस्त भाषाओं के लिए सामान्य शब्द है। पाली, शौरसेनी, अपभ्रंश आदि समस्त भाषाओं का समावेश प्राकृत में ही है। श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने अपने स्वयं निर्मापित "प्राकृत व्याकरण" में अपभ्रंशादि छहों ही भेदों को प्राकृत में सम्मिलित किया है, तथैव छहों ही के लक्षणादि का प्रतिपादन किया है। परन्तु हां, विशेष नाम छहों ही भाषाओं के भिन्न २ हैं। जैनागमों की भाषा का विशेष नाम प्राकृत नहीं परन्तु अर्धमागधी है। जिस प्रकार कि बौद्धों का आगम साहित्य पाली भाषा में है, उसी प्रकार जैन आगम साहित्य अर्धमागधी भाषा में है। कारण कि तीर्थंकर भगवान् अर्धमागधी भाषा में ही उपदेश देते थे तथा गणधर उसी भाषा में सूत्र ग्रथित करते थे।

जैनागमों में मुख्यतया द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग, धर्मकथानुयोग तथा चरणकरणानुयोग अर्थात् तत्वज्ञान, गणितज्ञान, महापुरुषों के चरित्र तथा आचार विचार सम्बन्धी विषय वर्णित किये गये हैं। तथैव इन सबका उद्देश्य मोक्षसाधन ही है। परन्तु वह भाषा जानने में न आवे तब तक विषय की यथार्थता एवं महत्वता समझ में नहीं आ सकती।

किसी भी भाषा के साहित्य का ज्ञान प्राप्त करना हो तो उस भाषा का व्याकरण तथा कोष इन दोनों अंगों का ज्ञान प्राप्त करना परमावश्यक है। जैन आगमों पर भाष्य, निर्युक्ति, चूर्णिका, दीपिका, टीका बालावबोध टबा आदि रचे गये, एवं पृथक् पृथक् भाषाओं में भाषान्तर भी हुवे। परन्तु उस भाषा को साक्षात् समझने के लिये जो व्याकरण और कोष की कमी थी, वह ज्यों की त्यों बनी रही।

श्री हेमचन्द्राचार्य जी तथा चण्ड ने व्याकरण बनाये परन्तु प्राकृत भाषा तथा महाराष्ट्रीय प्राकृत भाषा के। अर्धमागधी का नहीं। जैन साहित्य क्षेत्र में इस त्रुटि को पूर्ण करने के लिये भारत रत्न शतावधानी श्रीरत्नचन्द्रजी, महाराज ने कितने ही वर्षों से प्रयत्न किया। सात वर्ष पर्यन्त सतत परिश्रम द्वारा अर्धमागधी कोष तैयार किया एवं तदन्तर ही व्याकरण बनाना प्रारम्भ किया। बीकानेर निवासी श्रीयुत अगरचन्द्रजी भैरोंदानजी सेठिया की हार्दिक सहानुभूति से "जैन सिद्धान्त कौमुदी" नामक अर्धमागधी व्याकरण उन्होंने स्वकीय प्रेस में छपाया। कितने ही जिज्ञासुओं की यह

मांग आई कि संस्कृत के विद्वान् अर्धमागधी भाषा से अपरिचित होने के कारण उन्हें इस व्याकरण के समझने तथा समझाने में कितनी ही कठिनाइयाँ आती हैं। अतः इसकी यदि कोई सरल टीका बनजाय तो अध्ययनार्थी तथा अध्यापक दोनों के अनुकूल हो।

इस मांग की पूर्ति के लिए श्री शतावधानाजी महाराज ने "जैनसिद्धान्त कौमुदी" की संस्कृत टीका लिखनी प्रारम्भ की। साथ ही साथ मूल में पर्याप्त परिवर्तन किया गया। कितने ही सूत्र तो बिलकुल ही नवीन योजित किये गये और पुराने निकाल डाले गये। कितनों ही में अल्पाधिक परिवर्तन किया गया। प्रथमावृत्ति में समस्त धातु अकारान्त ही रक्खे गये थे, परन्तु इस आवृत्ति में धातुओं को व्यञ्जनान्त बना कर तत्पश्चात् अकार, एकारादि विकरण संयोजित किये गये हैं। इस तरह करने से सूत्रों में लाघवता भी आ गई है, जो कि पद्धति व्याकरणकारों ने बहु माननीय मानी है—कहा भी है कि—अर्धमात्रा लाघवेन वैयाकरणाः पुत्रोत्सवं मन्यन्ते।"

पहली आवृत्ति में समयाभाव के कारण कुछ अव्यवस्था सी प्रतीत होती थी, वह इस आवृत्ति में सुधार दी गई है।

सं० १९९० के साल में जब श्री शतावधानाजी महाराज का चौमासा जैपुर नगर में था, जैन सिद्धान्त-कौमुदी की टीका तभी तैयार हो चुकी थी तथा मुद्रणार्थ श्रीयुत अगरचन्दजी भैरोंदान जी सेठिया जी के पास बीकानेर प्रेषित की जा चुकी थी। किन्तु उनके प्रेस में छपने का कार्य उन दिनोंमें न चल रहा था। अतः छपने की व्यवस्था न हो सकी। इसी मध्य में बरेली निवासी श्रीयुत सेठ नगराजजी नाहर जो कि जब्बलपुर निवासी सेठ राजा गोकलदासजी की जयपुर वाली दुकान पर मुनीम हैं। उनके भाई रायबहादुर सेठ चाँदमलजी का स्वर्गवास हो जाने पर उनकी स्मृत्यर्थ जैन सिद्धान्त कौमुदी व्याकरण टीका सहित प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की। तदनुसार बीकानेर से व्याकरण की प्रति मंगाकर "प्रभात प्रिंटिंग वर्क्स" अजमेर से प्रकाशित करने की व्यवस्था की। परन्तु वहाँ प्रूफ सुधारने की व्यवस्था न होने से मात्र सात आठ फर्मे ही छप सके।

इस कठिनाई के कारण पुस्तक प्रकाशन का कार्य लाहौर लाना पड़ा। जहाँ कि पुनः प्रथम से ही यह ग्रन्थ छपेगा। छपे हुए साढ़े सात फर्मों में सन्धि, षड्लिंग पूर्ण हो जाते हैं। सेठ श्री नगराजजी नाहरकी इच्छानुसार अभी मात्र इतना ही भाग विद्यार्थियों के उपयोगार्थ प्रकाशित कर पाठक वर्ग की सेवा में अर्पण किया जा रहा है। आशा है जिज्ञासु सहृदय इससे लाभ उठावेंगे। कुछ मास के पश्चात् सम्पूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हो सकेगा, ऐसी पूर्ण सम्भावना है।

सुज्ञेषु किं बहुना ?

विनीत सेवक—

ता० १९-७-३५
अमृतसर

रामकुमार "स्नातक"
विद्याभूषण.

स्व० बन्धु रा० ब० चांदमलजी नाहर के स्मरणार्थ भेंट

तत्त्वबोधिनी व्याख्योपेता

जैन सिद्धान्त कौमुदी

(अर्द्ध मागधी व्याकरणम्)



स्व० रा० ब० चांदमलजी नाहर

रचयिता—

भारत रत्न शतावधानी पं० मुनि श्री रत्नचन्द्रजी महाराज

॥ ॐ नमोऽर्हद्भ्यः ॥

श्रीतत्त्वदीपिकाव्याख्योपेता

जैनसिद्धान्तकौमुदी

(अर्द्धमागधीव्याकरणम्)

प्रणम्य श्रीमहावीरं मोक्षमार्गप्रकाशकम् ।
रच्यते तत्त्वबोधाय जैनसिद्धान्तकौमुदी ॥

अथ तत्त्वदीपिका

श्रीपार्श्वपदपाथोजं नत्वा देवेन्द्रसेवितम् ।
कौमुद्याः क्रियते वृत्तिः स्वोपज्ञं तत्त्वदीपिका ॥१॥

प्रारिप्सितग्रन्थसमाप्तिपरिपन्थिप्रत्यूहव्यूहविघाताय विहितं नमस्कारात्मकं मङ्गलं शिष्टाचारपरिपालनार्थं ग्रन्थादौ निबध्नन् चिकीर्षितं प्रतिजानीते प्रणम्येति—प्रणामं कृत्वेत्यर्थः प्रणामश्च स्वावधिकोत्कर्षबोधनानुकूलो व्यापारः स च करशिरोविलक्षणसंयोगरूपः । तादृशव्यापारजन्यज्ञानरूपफलाश्रयतया श्रीमहावीरस्य कर्मत्वम् । श्रीमहावीरमिति—महान् कषायोपसर्गपरिषहेन्द्रियादिरिपुनिवहजयादतिशायी वीरो विक्रान्तः । विक्रान्त्यर्थस्य वीरधातोर्वीरयति स्मेति-विग्रहेण साधनात् । अथवा विशेषेणेरयति प्रापयति शिवं कल्याणं स्फेटयति वा कर्मेति वीरः । महांश्चासौ वीरश्च महावीरः पूर्वापरेति बाधित्वा सन्महदिति समासः । प्रकृतशासनपतिश्चरमस्तीर्थंकरः । श्रियाऽलौकिकया शोभया सहितो महावीरः श्रीमहावीरस्तम् ।

मोक्षमार्गेति—मोक्षस्य कृत्स्नकर्मात्यन्तोच्छेदरूपस्य मार्गः साधनं सम्यग्ज्ञानादिरत्नत्रयं तस्य प्रकाशकः प्रज्ञापकस्तम् । अनेनान्येच्छानधीनेच्छाविषयरूपस्य स्वतःप्रयोजनस्य साधकत्वात्स एव नमस्कार्य इति ध्वनितम् । रच्यत इति—मयेति शेषः रचना च स्वज्ञानं परान् बोधयितुं तदनुकूलवाक्यानां लिपिसन्निवेशविशेषः तत्त्वबोधायेति—तत्त्वानि जीवाजीवादिपदार्थाः । तानि च जैनागमेष्वर्द्धमागधीभाषायां हेतुयुक्तिदृष्टान्तपूर्वकं प्रतिपादितानि । आगम-भाषास्थपदानां साधुत्वासाधुत्वज्ञानं विना न भवति तत्तत्पदार्थानां यथार्थबोधः । पदानां साधुत्वासाधुत्वज्ञानजनकञ्च भवति तद्भाषाव्याकरणम् । अतस्तत्त्वबोधमुद्दिश्यैवास्य व्याकरणस्य रचनाप्रवृत्तिरिति भावः॥ जैनसिद्धान्तकौमुदीति—

मोदयतीति मुदः कौमुदः कुमुदश्चन्द्रः तस्येयं कौमुदी चन्द्रिका "चन्द्रिका कौमुदी ज्योत्स्नेत्यमरः" जैनसिद्धान्तानामागमादि प्रतिपाद्यपदार्थसार्थानां कौमुदीव कौमुदी जैनसिद्धान्तकौमुदी पदार्थप्रकाशकत्वादिगुणैश्चन्द्रिकासादृश्यमस्याः। अनेन ग्रन्थारंभेऽवश्यप्रदर्शनीयमनुबन्धचतुष्टयमपि प्रदर्शितं तथा हि—अर्द्धमागधीभाषाज्ञानद्वारा तत्त्वजिज्ञासुरत्राधिकारी भाषाङ्गानि सन्धिविभक्तिकारकसमासतद्धितधातुरूपकृदन्ताश्चास्य विषयः। भाषाज्ञानद्वारा तत्त्वबोधः फलम्। प्रतिपाद्यप्रतिपादकभावश्च सम्बन्धः। ननु व्याकरणरूपस्यास्य कथं तत्त्वबोधजनकत्वं तत्र तत्त्वप्रतिपादनाभावादिति चेन्न तत्त्वप्रतिपादकागमभाषाज्ञानसम्पादनद्वारा तत्त्वबोधजनकत्वस्य सुविदितत्वात्। तथा च भाषाज्ञानं साक्षात्फलं। तत्त्वबोधश्च परम्पराफलमिति विवेकः।

अथ संज्ञाप्रकरणम्

संज्ञाया लाघवेन शास्त्रव्यवहारप्रयोजकतया तद्घटितत्वेन सर्वप्रकरणाङ्गतया पूर्वमेव तत्प्रकरणमाह अथेति।

अ आ इ ई उ ऊ ए ओ स्वराः।१।१।८॥

स्पष्टम्।

अ-आ-इति—अभेदानुकरणत्वादत्र न विभक्तिः। संहिताया अविवक्षया च न सन्धिः। अकारादेः स्वरत्वेन सर्वत्र प्रसिद्धत्वेऽपि प्रकृतानामष्टानामेवात्रोपयोगितया तेषामेव तत्संज्ञा कृता एवमग्रे व्यञ्जनसंज्ञायामपि बोध्यम्॥

कखगघङ चछजझञ टठडढण तथदधन पफबभम यरलव सहा व्यञ्जनानि १।१।६॥

एते व्यञ्जनसंज्ञाः स्युः।

कखेति—अकारः सर्वत्र स्पष्टमुच्चारणार्थः। ननु स्वरविहीनानामपि व्यञ्जनानां वर्णान्तरसाहाय्येन यथा कथञ्चिदेकाकितया वोच्चारणमनुभूयत इति चेन्न। असहायतया स्पष्टत्वेन परश्रवणगोचरत्वस्यैवोच्चारणे निषेधात्। अत्रेतरेतरयोगो द्वन्द्वः। व्यञ्जनसंज्ञाया विचारस्तु पूर्वमुक्तप्राय एव। अत एव षशयोः संज्ञायां न प्रवेशः।

अइउ ह्रस्वाः॥ १। १। १४॥

एते ह्रस्वसंज्ञाः स्युः॥

अईति—सन्ध्यभावादिविचारस्तु पूर्ववत्। अत्र व्याकरणे प्रकृतस्वरत्रयस्यैव ह्रस्वतया प्रदर्शनेन त्रयाणामेव ह्रस्वसंज्ञा कृता। अत्र प्रत्येकस्वरस्य संज्ञा भवति न तु समुदायस्य तादृशप्रयोगासम्भवात्। न च

समुदाये वाक्यपरिसमाप्तिरिति न्यायेन समुदायस्यैव संज्ञोचितेति वाच्यं प्रत्येकं वाक्यपरिसमाप्तिरिति न्यायस्यैवात्राश्रयणादुभयोर्व्यवस्थितविषयत्वात् ॥

आईऊ दीर्घाः ॥ १ । १ । १३ ॥

स्पष्टम् ।

आईति—अत्र न समासः किन्त्वभेदानुकरणत्वाद्विभक्तेरभावः । समासे तु समुदाये संज्ञापत्तिर्दुर्निवारा स्यात् समासस्य समुदाये शक्तत्वात् कथंचिद्वारणकल्पनाया वाक्यमेव वरं प्रत्येकं संज्ञासिद्धये । एवमेव सर्वत्रैतादृशस्थले बोध्यम्–शेषविचारस्तु पूर्ववत् ।

कादिमान्ताः स्पर्शाः ॥ १ । १ । १५ ॥

स्पष्टम् ।

तत्र कादिङान्ताः कवर्गः । चादिञान्ताश्चवर्गः । टादिणान्ताष्टवर्गः । तादिनान्तास्तवर्गः पादिमान्ताः पवर्गः ।

कादीति—क आदिर्येषान्ते कादयः । मः अन्तो येषां ते मान्ताः । कादयो मान्ताश्च कादिमान्ताः पञ्चविंशतिर्वर्णाः स्पर्शा उच्यन्ते ॥ तत्रेति—तच्छब्दस्य प्रक्रान्तादिपरामर्शकत्वेन व्यञ्जनेष्वित्यर्थः ॥ कादिङान्ता इत्यादि—कादयश्च ङान्ताश्च कादिङान्ताः–क ख ग घ ङाः कवर्गशब्देन बोध्या एवमग्रेऽपि ॥ वर्गसंकेतप्रदर्शनफलन्तु स्फुटीभविष्यत्यग्रे ॥

अन्त्यात्पूर्व उपधा । १ । १ । २० ॥

अन्त्यवर्णात्पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः स्यात् ।

अन्त्यादिति—अन्त्यशब्देनान्त्यावयवो गृह्यते । अवयवत्वञ्च प्रस्तावाद्वर्णानामेवेत्यन्त्यवर्णो लभ्यते । तथा च यज्जातीयकोऽन्त्यस्तज्जातीयक एवान्त्यात्पूर्व इति पूर्वो वर्णो लभ्यते ॥

अनुस्वारः । १ । १ ।१० ॥

अनुस्वारो व्यञ्जनसंज्ञः स्यात् ।

अनुस्वार इति—व्यञ्जनानीत्यनुवर्त्तते । अभेदानुरोधाद्वचनविपरिणामः । अं इत्यत्र स्वरात्परो विद्यमानो विन्दुरनुस्वार उच्यते । तस्य व्यञ्जनसंज्ञाविधानफलन्तु व्यञ्जनान्तरेण सह संयुक्तसंज्ञासिद्धिः । तेनोवज्जेत्यादौ व्यञ्जनत्रयसंयोगे सति व्यञ्जनीभूतस्य पूर्वस्यानुस्वारस्य त्रयाणामिति सूत्रेण लोपः सिद्ध्यति ।

स्वराणामन्त्यादिष्टिः ॥ १ । १ । १९ ॥

स्वराणां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य स टिसंज्ञः स्यात् ॥

स्वराणामिति—अत्र निर्धारणे षष्ठी तेन मध्ये इत्यस्य लाभः। तदन्त्योऽपि स्वर एव ग्राह्यो न तु व्यञ्जनम्। सजातीयस्यैव निर्धार्यमाणत्वात्। अत एव गवां मध्येऽन्त्यमानयेति प्रयोगे प्रयुज्यमानो गामेवानयति न महिषादिकमिति। न हि विजातीयस्य निर्धार्यमाणत्वे षष्ठ्या अपि सम्भवः। अन्त्यादिरिति—यद्यप्यत्र सामान्ये नपुंसकमेवोचितं तथापि शब्दशास्त्रे शब्दस्यैव प्राधान्यं सूचयितुमध्याहृतशब्दरूपविशेष्यमपेक्ष्य पुंस्त्वस्यापि सम्भवेनाऽन्त्यादिरित्युक्तम्। तत्रादिः क्वचित्प्रधानं क्वचिदातिदेशिकः यथा छिन्द्धातोर्डेञ्ज्प्रत्यय इन्दुभागस्य टिसंज्ञा तत्रादिर्मुख्यः। खाधातोर्डेञ्ज्प्रत्यय आकारस्य टिसंज्ञा तत्रादिरातिदेशिकः असहायत्वात्।

अप्रयुज्यमानः सफल इत्। १। १। १६॥

लौकिकप्रयोगेषु न प्रयुज्यमानः किञ्चित्कार्यं विधातुं प्रत्ययादावनुबद्धो वर्ण इत् संज्ञः स्यात् ॥

अप्रयुज्यमान इति—इत्संज्ञकस्यापि प्रत्ययादौ प्रयुज्यमानत्वादप्रयुज्यमान इत्यसंगतमित्याशंक्याह-प्रयोग इति। प्रकृतिप्रत्ययादेरपि प्रयोगत्वात्तत्र प्रयुज्यमानत्वस्यैव सत्त्वेन दोषस्तदवस्थ एवेत्याशङ्कायामाह लौकिकेति—लौकिकत्वंचार्थबोधनाय प्रयुक्तत्वं शास्त्रे तु शब्दानां शब्दपरत्वाददोषः। प्रकृत्यादावपि स्थायित्वाभावात् करिष्यमाणेत्संज्ञकस्योच्चारणं व्यर्थमित्याशङ्कायामाह किंचित्कार्यं विधातुमुपात्त इति अलौकिक प्रयोग इति शेषः। अलौकिकश्च साध्यावस्थापन्नः प्रकृतिप्रत्ययादिः। किञ्चित्कार्यं—टित्त्वकित्त्वादि तत्सम्पादनेन साफल्यमस्य बोध्यम् ॥

प्रसक्तस्यादर्शनं लोपः॥ १। १। १७॥

स्पष्टम्।

प्रसक्तस्येति—प्राप्तस्येत्यर्थः न तु स्थितस्यैवेत्यर्थः तेन सार्थकस्याविद्यमानत्वेऽपि "आसणाओ पासइ" इत्यादौ सार्थकान्तस्य शब्दस्य प्राप्त्यैव तदभावस्य लोपसंज्ञायां पञ्चमी सिद्ध्यति अदर्शनं—दर्शनाभावः। अभावार्थेऽव्ययीभावः

इतः॥ ३। ४। ५२॥

इत्संज्ञकस्य लोपः स्यात् ॥

इत इति—तीपि न्तस्येति सूत्राल्लोप इत्यनुवर्त्तते नन्वित्संज्ञां विधाय लोपकरणापेक्षयेत्संज्ञकत्वेनोद्दिष्टानां लोप एव विधीयताम्। किं लोपशास्त्रस्य परमखनिरीक्षणेनेति चेन्न [illegible] आवश्यकत्वात्।

स्वरादनन्तराणि संयुक्तम् ॥ १ । १ । ११ ॥

स्वराव्यवहितानि व्यञ्जनानि संयुक्तसंज्ञानि स्युः ॥

स्वरादिति—जात्यपेक्षयैकवचनं तेन स्वरद्वयादिव्यवधानेऽपि संयुक्तसंज्ञा न भवतीति—यद्यप्यव्यवहितानि संयुक्तानीत्यनेनापि स्वराव्यवहितानीत्यस्य लाभः संभवति विजातीयेनैव व्यवधानस्य प्रसिद्धतया व्यञ्जनानां स्वरेणैव व्यवधानसम्भवेन तेनैवाव्यवधानस्यापि लाभसम्भवात् । तथापि स्पष्टतया तत्प्रतिपादनायैव स्वरादित्युक्तम् । व्यञ्जनानीति—अनुस्वारो व्यञ्जनमिति सूत्राद्व्यञ्जनमित्यस्यानुवृत्तिः । बहुत्वमत्राविवक्षितं द्वयोरपि संयुक्तसंज्ञादर्शनात् प्रत्येकं तु न संयोगसंज्ञा लक्ष्यानुरोधात् । आर्या दण्डयन्तामितिवत् समुदाये वाक्यपरिसमाप्तेः ।

आदेदोद् वृद्धिः ॥१।१।१२ ॥

आत् एत् औत् इत्येते वृद्धिसंज्ञाः स्युः ॥

आदिति—अत्र पदत्रयम् । स्पष्टप्रतिपत्त्यर्थं तकारत्रयनिवेशः । समुदायसंज्ञावारणादिप्रकारस्तु दर्शित एव । अत्रादेदौच संज्ञिनः वृद्धिः संज्ञा न तु विपरीतमनुवाद्यमनुद्दिश्य न विधेयमुदीरयेदिति वचनात्पूर्वोच्चारिताः संज्ञिनः परोच्चारिता संज्ञेति नियमात् ।

अदिदुतामदाताविदीदेत उदूदोतः सवर्णाः ।१।१।२१॥

अदिदुतां क्रमेण अदातौ इदीदेतः, उदूदोतः सवर्णा भवन्ति ॥

अदिदुतामिति—अच इच उच अदिदुतस्तेषाम् । अच आच अदातौ । इच ईच एच इदीदेतः । उच ऊच ओच उदूदोतः । इति त्रयः समुदाया अकारेकारोकाराणां त्रयाणां क्रमेण सवर्णा भवन्ति । तथाचाकारस्याकाराकारा विकारस्येकारेकारैकारा उकारस्योकारोकारौकाराः सवर्णा भवन्तीति सिद्धम् ।

वर्गेषु प्रथमद्वितीययोः प्रथमस्तृतीयचतुर्थयोस्तृतीयः । १। १ ।२२ ॥

कचटतपवर्गेषु कखयोश्चछयोष्टठयोस्तथयोः पफयोः कचटतपाः गघयोर्जझयोर्डढयोर्दधयोर्बभयोः क्रमेण गजडदबाः सवर्णा भवन्ति ॥

वर्गेष्विति—कवर्गचवर्गटवर्गतवर्गपवर्गेष्वित्यर्थः प्रथमत्वादिव्यवहारश्च मातृकावर्गपाठापेक्षया बोध्यः । अदिदुतामिति सूत्रात्सवर्णा इत्यस्यानुवृत्तिः क्रमेणेति तथा च कखयोः ककारश्चछयोश्चकारष्टठयोष्टकारस्तथयोस्तकारः पफयोः पकार एवं गघयोर्गकारो जझयोर्जकारो डढयोर्डकारो दधयोर्दकारो बभयोर्बकारः सवर्ण इति सिद्धम् ।

विशेषणं तदन्तस्य ॥ १ । १ । २३॥

विशेषणं तदन्तस्यापि संज्ञा स्यात् ।

विशेषणमिति—अत्र शास्त्रे विशेषणत्वेन यदुपादीयते तदेव विशेषणपदेनाभिधीयते। विशेषणं व्यावर्तकम्। तथा च नाम्न इत्याद्यनुवृत्तौ तद्विशेषणमदादिपदं तदन्तस्य संज्ञाकरणेनादन्तादिबोधकं भवति अतएव तत्तत्स्थलेऽभेदान्वयः सम्पद्यते यथाऽदितः पुंस्यत इत्यादि सूत्रेऽत इत्यनेनादन्तस्य ग्रहणं नामपदस्याभेदान्वयेऽदन्ताभिन्ननाम्नः परस्येत्याद्यर्थो लभ्यते। २

सुप्त्यादि विभक्तिः॥ १। १। २८॥

सुप् त्यादि च विभक्तिसंज्ञे स्तः॥

सुप्त्यादीति—अत्र सुप्पदेनोदादीस्वन्तो गृह्यते। त्यादिपदेनाज्ञाप्रवर्त्तनावर्त्तमानभूतभविष्यदर्थकाः प्रत्ययाः। अन्यत्र तु त्यादिपदेन तिन्तिसिहमिमव एव गृह्यन्ते तेन त्यादिपदेनाज्ञाद्यर्थकं प्रत्ययमुपादाय तस्मिन् परे विधीयमान प्रत्यया न विधेया इतिसिद्धम्॥ उक्तसुप्त्यादेर्विभक्तिसंज्ञायाः फलन्तु 'अविभक्ति नामेति' सूत्रेण तदन्तस्य नाम संज्ञानिषेधः तत्र विभक्तिरहितस्यैव नामसंज्ञाविधानात्।

इति संज्ञाप्रकरणम्।

इतीति—सन्धिकार्योपयोगिनीनां व्यापिकानां च संज्ञानां प्रकरणं समाप्तमित्यर्थः।

अथ परिभाषाप्रकरणम्।

स्वरस्य ह्रस्वदीर्घवृद्धयः॥ १। १। १॥

ह्रस्वदीर्घवृद्धिशब्दैर्यत्र ह्रस्वदीर्घवृद्धयो विधीयन्ते तत्र स्वरस्येतिपदमुपतिष्ठते॥

स्वरस्येति—इदञ्च न विधायकं तत्तत्सूत्रेणैव ह्रस्वादिसिद्धेर्नचानेनैव ह्रस्वादिसिद्धौ माऽस्तु तत्तत्सूत्रमिति वाच्यम्। सामान्यतया तद्विधाने ह्रस्वस्वराणामेव विलयापत्तेः। नापि नियामकम्। नियामकत्वं हि द्विविधं स्वरस्यैव ह्रस्वदीर्घवृद्धय इत्येकम्। स्वरस्य ह्रस्वदीर्घवृद्धय एवेति द्वितीयम्। तत्र व्यञ्जनस्य तदसंभवादाद्यं व्यर्थम्। द्वितीयमपि न सम्यक् स्वरलोपादिविधायकस्य वैयर्थ्यापत्तेः। नचेष्टापत्तिरिति वाच्यम्। बहुलक्ष्यासिद्ध्यापत्तेः। नापि संज्ञासूत्रं तत्तत्सूत्रेणैव स्वरस्य ह्रस्वादिसंज्ञासिद्धेः। न चानेनैव तन्निर्वाहः सम्भवति स्वरसामान्यस्य संज्ञात्रयकरणेऽनिष्टापत्तेः। नापि प्रतिषेधकं नञोऽश्रुतेः। नाप्यधिकारसूत्रमुत्तरत्रानुवृत्त्यभावाद्वैयर्थ्यापत्तेः। नाप्यतिदेशः वतिघटितत्वाभावात् किन्तु परिशेषात्परिभाषासूत्रमिदम्। षड्विधान्येव हि सूत्राणि संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च॥ अतिदेशोऽधिकारश्च षड्विधं सूत्रलक्षणमित्युक्तेः। तथाच

ह्रस्वदीर्घवृद्धिशब्दानां ह्रस्वदीर्घवृद्धिशब्दैर्विहितह्रस्वदीर्घवृद्धिषु लक्षणया ह्रस्वदीर्घवृद्धिशब्दैर्यत्र ह्रस्वदीर्घवृद्धीनां विधानं तत्र स्वरस्येति पदमुपतिष्ठते इत्यर्थसिद्धौ पदोपस्थापकत्वमस्य सिद्ध्यति इतिपदस्योपतिष्ठत इति पदस्य चाध्याहारः। ह्रस्वदीर्घवृद्धिशब्दैरित्यस्याभावे भगवया भगवन्नो इत्यादाविणस्सयोर्विधीयमानस्याकारौकारस्यापि दीर्घवृद्धिरूपत्वेन तत्रापि स्वरस्येति पदोपस्थित्या "इणस्सयोः स्वरस्यैवादेशापत्तेः।

प्रत्ययस्य लोपः सर्वस्य। १। १। २॥

प्रत्ययस्थानिको लोपः सम्पूर्णस्थाने बोध्यः॥

प्रत्ययस्येति—षष्ठी निर्दिष्टत्वादन्त्यस्य प्राप्ताविदं सूत्रम्। तथा चान्त्यस्य षष्ठ्या इति सूत्रस्यापवादः। अत एव हेरत इति सूत्रेण विधीयमानो लोपोऽन्त्यमात्रस्य न। किन्तु हेः समुदायस्यैव। तत्रासति तात्पर्ये इत्यपि बोध्यम्। अत एव यत्र प्रत्ययस्यान्त्यमात्रलोपे तात्पर्यमस्ति तत्र न समुदायलोपशंकावसरः। तात्पर्यज्ञानं च प्रकरणादिना बोध्यम्। ननु अवयवे प्रत्ययत्वाभावेन तत्स्थानिकलोपस्य सुतरां प्रत्ययस्थानिकत्वाभावेनैवास्य सूत्रस्याप्राप्त्या व्यर्थमेवेदं सूत्रमितिचेन्न। न ह्यवयवेऽपर्याप्तस्य समुदाये पर्याप्तिरस्तीति नियमेनावयवेऽपि प्रत्ययत्वपर्याप्तिसम्बन्धस्य सत्त्वेन प्रत्ययस्थानिकत्वानपायात्। तथा च प्रत्ययावयवस्य प्राप्तो लोपः तदवयवघटितसमुदायस्यैव स्यादिति फलितार्थः। (एतेन प्रत्ययस्थानिक इत्यस्य प्रत्ययत्वपर्याप्तस्थानिताक इत्यर्थः तथा च प्रत्ययावयवस्य लोपबाधनार्थमिदं सूत्रमित्यसंगतमेव प्रत्ययावयवे प्रत्ययत्वस्याभवेन तत्रैतत्सूत्राप्रवृत्तेः पर्याप्तिसम्बन्धेन समुदाय एव प्रत्ययत्वस्य सत्त्वादित्यपास्तम्)। अवयवे पर्याप्त्याऽवर्तमानस्य धर्मस्य समुदायेप्यसम्भवात् प्रत्येकमिलितस्यैव समुदायरूपत्वात्। तदुक्तं महाभाष्ये 'एकस्तिलस्तैलदाने यतः समर्थोऽतस्तत्खार्यपि ददाति। एका च सिकता न समर्थाऽतस्तत्खार्यपि न ददातीति।" तथा च प्रत्येकावृत्तेः समुदायावृत्तित्वमिति सिद्धम्। प्रत्येकापर्याप्तस्यापि समुदाये पर्याप्तिरस्ति। अन्यथैकस्मिन् भृत्येऽवर्त्तमानस्य शिविकावहनसामर्थ्यस्य तत्समुदायेपि वृत्तित्वं न स्यादिति पक्षाश्रयणे तु प्रत्ययपदस्य प्रत्ययावयवे लक्षणया प्रत्ययावयवस्थानिकलोपः तद्घटितसमुदायस्यैवेत्यर्थो बोध्यः॥

स्वराणामन्त्यात्परो मित्॥१। १। ४॥

स्वराणां मध्ये योऽन्त्यस्वरस्तस्मात्परो मिदागमः स्यात्॥

स्वराणामिति—निर्धारणे षष्ठी। तेनान्त्यस्वर इति लभ्यते सजातीयस्यैव निर्धार्यमाणत्वादित्युक्तमेव। मकार इत् यस्मिन्निति मित्। इणाणोहीसीसूनां ममिति सूत्रेणाणादेर्ममागमे विहितेऽनेन तस्यान्त्यस्वरात्पर इति स्थाननिश्चये जिणेण मित्यादिः सिद्ध्यति। आगमस्य किद्वावेप्यन्त्यावयवत्वसिद्धौ व्यर्थमेतदिति तु न शङ्क्यं लभादेर्ममागमे सफलमेतत्। तत्र ममागमे भकारस्य स स्यात्तथाच लंभेत्यादिरूपासिद्धेः॥

समानयोर्विरोधे परम् ।१।१।५॥

तुल्यबलयोर्युगपदेकत्र प्रसङ्गे परं कार्यं स्यात् ।

समानयोरिति—समानस्तुल्यबलः अन्यत्रान्यत्र लब्धावकाश इति यावत् । विरोध एकत्र तयो-र्द्वयोर्युगपत्प्राप्तिः । एतेन निरवकाशस्याधिकबलस्य व्यवच्छेदः कृतः तथा तुल्यबलस्याविरुद्धस्य च निवारणं कृतम् ।

अन्त्यस्य षष्ठ्याः ॥१।१।६॥

षष्ठ्यन्तस्य क्रियमाणं कार्यमन्त्यस्य बोध्यम् ।

अन्त्यस्येति—कार्यमित्यध्याहृतम् षष्ठ्या इत्यत्र स्थान्यादेशभावः षष्ठ्यर्थः । तेन क्रियमाणमिति लभ्यते प्रत्ययग्रहणे तदन्तग्रहणमितिपरिभाषया षष्ठ्यन्तस्येति लभ्यते । यत्र स्थानषष्ठी विद्यते तत्रैवास्य सूत्रस्य प्रवृत्तिर्न त्ववयवावयविभावार्थकषष्ठीस्थले तेनागमेऽस्य न प्रवृत्तिः । षष्ठ्यन्तस्येत्यस्य षष्ठ्यन्तपद-बोध्यस्येत्यर्थः ।

अनेकवर्णसित् ॥१।१।३॥

अनेकवर्णादेशः सिदादेशश्च सर्वस्य बोध्यः ।

अनेकवर्णेति—आदेश इत्यध्याहारलब्धः । अन्त्यस्य षष्ठ्या इत्यस्यापवादः । अनेको वर्णो यत्रेति-बहुव्रीहिः । सकार इद्यत्र स सित् अनेकवर्णश्च सिच्चेति समाहारद्वन्द्वः तेनैकवचनं सिद्ध्यति । न चेतरेतरयोगेऽपि सौत्रत्वादेकवचनं सिद्ध्यतीतिवाच्यम् । सिद्धगत्यैव निर्वाहे सौत्रत्वकल्पनाया व्यर्थत्वात् । सर्वस्येति पूर्वसूत्रादनुवर्तते ॥

टकितावाद्यन्तौ ॥१।१।७॥

टित्कितौ यस्य विहितौ तस्याद्यन्तौ भवतः ।

टकिताविति—टश्च कश्च टकौ । टकावितौ ययोस्तौ टकितौ । आदिश्च अन्तश्चाद्यन्तौ । टकारेऽकार उच्चारणार्थः । अत्र क्रमेणान्वयाट्टित्कार्यमाद्यवयवो भवति कित्कार्यमन्त्यावयवो भवति । ननु एक धर्मावच्छिन्न एकरूपेणैकसम्बन्धेनान्वयरूपस्य साहित्यस्यात्राभावेन कथं द्वन्द्वसम्भवः टित आदौ कितोऽन्तेऽन्वयादिति चेत्सत्यम् । शत्रुं मित्रं विपत्तिं च जय रञ्जय भञ्जयेत्यादौ लोके समसंख्यानां यथासंख्येनैवान्वयस्य दृष्टत्वेन व्याकरणेपि तथैव सिद्धौ पाणिनीयतन्त्रे यथासंख्यसूत्रारम्भसामर्थ्याद् व्याकरणे साहित्याभावेपि द्वन्द्वो भवतीति ज्ञापनात् ।

॥ इति परिभाषा प्रकरणम् ॥

अथ स्वरसन्धिप्रकरणम्

वृद्धिरतः स्वरे परस्य सवर्णः । ३ । २ । ३० ।

अकारात्स्वरे परे पूर्वपरयोः परस्य सवर्णा वृद्धिरेकादेशः स्यात् ॥ जिणेसरो । चाउलोदगं । समणोवासगो ।

वृद्धिरिति—पूर्वसूत्रात्पूर्वपरयोरित्यस्यानुवृत्तिः । विशेष्यानुरोधात् सवर्णस्य स्त्रीत्वम् । जिण + ईसरो इत्यत्र पूर्वपरयोरकारेकारयोः स्थाने परस्येकारस्य सवर्णा वृद्धिरेकारः । आकारादेर्वृद्धित्वेऽपि नेकारसावर्ण्यमिति न जिणासरो अपितु जिणेसरो । चाउल + उदगमित्यत्रोकारस्य सवर्णा वृद्धिरोकारः । एवं समण + उवासगो इत्यत्रापि ।

आदिदुतः सवर्णे दीर्घः । ३ । २ । ३१ ॥

अकारादिकारादुकाराच्च सवर्णे स्वरे परे पूर्वपरयोर्दीर्घ एकादेशः स्यात् ॥ गमणागमणे । अईति । भाणूदयो ॥

अदिदुत इति—अत्र समाहारद्वन्द्वः । अत एवैकवचनम् । तपरकरणमसन्देहार्थं न तु समानकालग्रहणार्थम् । तेन दीर्घाणामप्याकारादीनां ग्रहणम् । एकारादेरपीकारादिसावर्ण्यात्तस्मिन्परे पूर्वपरयोर्दीर्घ एकादेशःस्यादित्यतः स्वरादित्यनुक्त्वाऽदिदुत इत्युक्तम् ॥ गमणागमण इति—अत्राकाराकारयोः स्थाने दीर्घ एकादेशः । एवं अइ + इति । भाणु + उदयो इत्यत्रेकारयोरुकारयोश्च स्थाने दीर्घादेशः ॥

स्वरयोरव्यवधाने । ३ । ४ । २१ ॥

स्वरयोर्व्यवधानाभावे प्रकृतिभावो बहुलं स्यात् । अअगरो । अइई । अइही । अउज्झा । अइयारो । पंजलिउडा ।

स्वरयोरिति—प्रकृतिभावो बहुलमिति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । बाहुल्यञ्च "क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः क्वचिद्विभाषा क्वचिदन्यदेव । विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति" बाहुलकमित्यत्र स्वार्थे कन् तेन बहुलमित्यर्थः । तथा च रूढशब्दघटकस्वरस्य तद्घटकस्वरेण नित्यं प्रकृतिभावः । समासादौ त्वसवर्णयोः स्वरयोर्यथाप्रयोगं सः । सवर्णयोस्तु प्रायो दीर्घ एव । असवर्णेऽपि प्रायोऽतः स्वरे परे वृद्धिरेव । केवलमिकारोकाराभ्यामेवासवर्णे स्वरे परे प्रायः प्रकृतिभावः ।

लोपोऽन्यतरस्य । ३ । ४ । २४ ॥

स्वरयोरव्यवधानेऽन्यतरस्य लोपो बहुलं स्यात् । इक्कसीई । तहत्ति । तेसी । तत्थिमं । नोवलभामहं । रमामहं । जिणामहं । नस्सामहं ॥

लोप इति—अत्रानुक्तस्य पूर्वसूत्रादनुवृत्तिः । अन्यतरस्येति—पूर्वस्य वा परस्येत्यर्थः । प्रयोगेषु यथा यथोपलभ्यते तथा तथा पूर्वस्य वा परस्येति निर्धार्य तेन विनिगमनाविरहाद्विपरीतलोपस्तु न शङ्क्यः । इक्क + असीइ । तह + इत्ति । ते + असी । इत्युदाहरणत्रये परस्य स्वरस्य लोपः । तत्थ + इमं । दस० ६, ९; नोवलभामि + अहं । उत्त० १९, १३; रमामि + अहं । उत्त०१९, १४; जिणामि + अहं । उत्त० २३,३६; नस्सामि + अहं । उत्त०२३, ६१; इत्युदाहरणपञ्चके पूर्वस्य लोपः ॥

पूर्व एकः पूर्वपरयोः । ३।२।२५॥

इदुतोरसवर्णे स्वरे परे पूर्वस्य सजातीय आदेशः स्यात् । पल्लंको । समन्नितो ।

पूर्व इति—पूर्वस्येति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । इदुतोदित्यत्र तकारः स्पष्टार्थो न तु दीर्घादिनिवृत्त्यर्थः तेनेदुतो रित्यनेन ह्रस्वदीर्घयोरिकारेकारयोरुकारोकारयोश्च ग्रहणम । पूर्वशब्देनोपात्तत्वात्स्थान्यव्यवहितपूर्वस्यैव बोध्यम्। तेन पूर्वशब्देन यत्किञ्चिदादाय न पकारादिसदृशस्यापत्तिः । साजात्यञ्च पूर्ववर्णवृत्त्यानुपूर्व्या न तु वर्णत्वादिना तेन नापत्तितादवस्थ्यम् । बाहुलकात्पंजलिउडेत्यादौ प्रकृतिभाव एव । पलि + अंको इत्यत्र लकारोत्तरवर्त्तीकारस्य लकारादेशः । समनु + इतो इत्यत्र नकारोत्तरवर्त्त्युकारस्य नकारादेशः ॥

समानयोः पूर्वस्य सवर्णः । ३।२।२२ ॥

समानवर्णद्वयाव्यवधाने पूर्वस्य स्वसवर्ण आदेशः स्यात् । अब्भुट्ठेमि ॥

समानयोरिति—सदृशयोरित्यर्थः सादृश्यञ्चानुपूर्व्या तथा चैकानुपूर्वीकवर्णद्वयस्याव्यवधानमित्यर्थः । पदव्यवच्छेदार्थं वर्णेति पूर्वस्येति स्थानषष्ठी पूर्वस्य स्थाने इत्यर्थः । सवर्ण इति कस्य सवर्ण इत्याकांक्षायामाह-स्वसवर्ण इति स्थानिना सह गरिष्ठसम्बन्धात्स्थानिसवर्ण एव भवतीति भावः । द्वयमिति फलितार्थं व्यञ्जन-त्रयसममिव्याहाराभावात् । सावर्ण्यञ्च वर्गेर्वेति सूत्रे दर्शितम् । अभि + उट्ठेमि इत्यत्रेकारस्य भकारे जाते पूर्वभकारस्य सवर्णो बकारः ।

तरहेभ्यश्चजझा इदुतोरसवर्णे स्वरे । ३।२।२४॥

तकाररेफहकारेभ्यः परयोरिदुतोः क्रमेण चजझा आदेशाः स्युरसवर्णे स्वरे परे । पच्चपिणइ । पज्जुवासेणा । अज्झयणं ॥

तरहेभ्य इति—असवर्णे स्वर इति स्थान्यादेशानां यथासंख्यत्वाभावेऽपि निमित्तादेशानां यथा संख्यत्वेन

क्रमेणेति लाभः । तथा च तकारात्परयोरिदुतोश्चकारः । रेफात्परयोर्जकारः । इकारात्परयोश्च झकार इत्यर्थः । पति + अप्पिणइ इति प्रथमोदाहरणेऽनेनेकारस्य चकारे तकारस्य परसवर्णः । परि + उवासणेति द्वितीय इकारस्य जकारे रेफस्य परसवर्णः । अहि + अयणमिति तृतीय इकारस्य जकारे हकारस्य परसवर्णे झकारः ॥

सिस्सादिषु संयुक्तस्य वा तस्मिन्पूर्वस्य दीर्घः । ४ । १ । ११ ॥

एषु संयुक्तस्यादेर्लोपो वा तस्मिन्सति पूर्वस्वरस्य दीर्घः स्यात् । सीसो, सिस्सो । दूसहो, दुस्सहो । णीणेइ । वीसमइ, विस्समइ । आसासिअ ॥ आसो, अस्सो । आसत्थो, अस्सत्थो । आभक्खाणं, अब्भक्खाणं ॥

सिस्सादिष्विति—'चोरवणिगृभ्या'मिति सूत्रादादेरित्यस्य 'लोपोऽन्यतरस्येति' सूत्राल्लोप इत्यस्य चानुवृत्तिः । सिस्सादिषु—सिस्सादिगणपठितेषु शब्देषु धातुषु च सिस्सो, दुस्सहो, णिण्णेइ, विस्समइ, अस्सासिअ, अस्सो, अस्सत्थो, अब्भक्खाणं, मणुस्सो, लुक्खो, अमावस्सा, जिब्भा एते सिस्सादयः । आकृतिगणोऽयम् सूत्रस्यैकस्मिन्प्रयोगे सकृत्प्रवृत्तत्वात्तत्कृतलोपदीर्घयोः प्रवृत्तौ न पुनस्तथा । तेनाब्भक्खाणमित्यादिषु आभक्खाणमित्येवरूपं न त्वाभाखाणमित्यपि शास्त्रेषु तथानुपलब्धेः प्रयोगानुसारित्वाच्च सूत्रप्रवृत्तेः ।

स्वरादस्य यड् बहुलम् । ४ । १ । ५६ ॥

स्वरात्परयोरकाराकारयोर्यडागमो बहुलं स्यात् ॥ विपरियासो, विपरिआसो । पलियंको, पलिअंको ॥

स्वरादिति—अकारेणाकारस्यापि ग्रहणादाह अकाराकारयोरिति विपरि + आसो इति स्थिते इकारात्परस्याकारस्य यडागमे टित्त्वादाकारस्याद्यवयवत्वे विपरियासो । यडागमाभावे विपरिआसो एवं पलि + अंको इत्यत्र यडागमे पलियंको पक्षे पलँको ॥

स्वराद्यस्य स्वरे ॥ ३ । ४ । २५ ॥

स्वरात्परस्य यकारस्य लोपो बहुलं स्यात् स्वरे परे । जिइंदिए । गइंदो ॥

स्वरादिति—बहुलं लोप इत्यनयोः पूर्वसूत्रादनुवृत्तिः । जिय + इंदिए इत्यत्रेकाराकारयोर्मध्ये स्थितस्य यकारस्य लोपः । गय + इंदो इत्यत्राकारद्वयमध्यस्थितस्य यकारस्य लोपः । यलोपे सत्यवशिष्टस्याकारस्य लोपोऽन्यतरस्येति सूत्रेण लोपः ।

संयुक्ते ॥ ३ । ३ । २ ॥

संयुक्ते परे पूर्वस्य स्वरस्य ह्रस्वो बहुलं स्यात् । अक्कोसइ । किण्णो । पत्तं । भारियत्ता । गीच्छज्जा । गच्छेज्जा । हुज्जा । होज्जा ॥

संयुक्त इति—बाहुलकादुदाहरणचतुष्टये नित्यं ह्रस्वः । अन्तिमोदाहरणद्वये विभाषया ह्रस्वः । ह्रस्वो बहुलमित्यनयोः पूर्वसूत्रादनुवृत्तिः । स्वरस्य ह्रस्वदीर्घवृद्धय इति परिभाषया स्वरस्येति लाभः । पूर्वस्येति फलितार्थः । आ + कोसइ = अक्कोसइ । की + रणो = किरणो । पा + त्तं = पत्तं । भारिया + त्ता = भारियत्ता । गच्छ + एज्जा = गच्छिज्जा, गच्छेज्जा । हो + ज्जा = हुज्जा, होज्जा ॥

इति स्वरसन्धिप्रकरणम् ।

अथ व्यञ्जनसन्धिः ।

अहे व्यञ्जनस्य परस्य ॥ ३ । २ । २३ ॥

हभिन्ने व्यञ्जने परे पूर्वव्यञ्जनस्य परसवर्ण आदेशः स्यात् ॥ सक्कारो । उक्कसो । निच्चरइ । इड्ढी ॥

अह इति—न हः अहः तस्मिन् हभिन्न इत्यर्थः अत्र लाघवान् नञः पर्युदासार्थो गृह्यते न तु प्रसज्यप्रतिषेधार्थः । नञः क्रिययाऽन्वयेनाऽसमर्थसमासकल्पनेन च गौरवात् । पर्युदासो भेदः सादृश्यञ्च तथा च हभिन्ने हसदृश इत्यर्थलाभः । सादृश्यञ्च व्यञ्जनत्वेनेत्यत आह हभिन्ने व्यञ्जने परे पूर्वस्येति सवर्ण इति च पूर्वसूत्रादनुकृष्येते । अहे इति किम् ? । तुम्हे अम्हे इत्यादौ मकारस्य हकारो माभूदिति । सत् + कारो । उत् + कसो । निर् + चरइ । इत्युदाहरणत्रये पर एव परसवर्णः । इध् + ढी इत्यत्र तु डकारः ढकारस्य सवर्णः ।

त्रयाणाम् ॥ ४ । १ । १२ ॥

त्रयाणां व्यञ्जनानां संयुक्तस्यादेर्लोपः स्यात् । निच्छुभइ । पुट्ठो ॥

त्रयाणामिति—लोपोऽन्यतरस्येति सूत्राल्लोपः । चोरवणिग्भ्यामित्यत आदेः । सिस्सादिष्विति सूत्रात्संयुक्तस्येत्येतत्पदत्रयमनुकृष्यते । व्यञ्जनानामिति विशेष्यं विशेषणबलाल्लभ्यते । शास्त्रेषु व्यञ्जनद्वयस्यैव संयोग उपलभ्यतेऽसौ यत्र त्रयाणां व्यञ्जनानां संयोगस्तत्र त्रयाणामादिव्यञ्जनस्य लोप इत्यर्थः । निर् + च्छुभईत्यत्रादिव्यञ्जनस्य रेफस्य पुच्छ् ठो इत्यत्रादिव्यञ्जनस्य चकारस्य च लोपः ॥

अपूर्वस्य ॥ ४ । १ । १३ ॥

संयुक्तस्यादेर्लोपः स्यात् संयुक्तमपूर्वं चेत् । कमइ । किणेइ । अपूर्वस्य किम् । निक्कमइ । विक्केइ ॥

अपूर्वस्येति—पूर्ववत्पदत्रयस्यानुवृत्तिः । अपूर्वस्येत्यत्र न पूर्वो यस्मात्तदपूर्वमिति विग्रहस्तेन संयुक्तमपूर्वं चेदिति फलितार्थः । नि + क्कमईत्यत्र संयुक्तस्य निपूर्वकत्वात् वि + क्केहेत्यत्र विपूर्वकत्वाच्च न लोपः ॥

दो ह्रो धः ॥ ३ । ४ । ६ ॥

दकारात्परस्य हकारस्य धकारः स्यात् । उद्धरो ॥

द इति—दः हः ध इति पदत्रयं क्रमेण पञ्चम्यन्तं षष्ठ्यन्तं प्रथमान्तञ्च । उद् + हर इत्यत्र हकारस्य हभिन्नत्वाभावादहे व्यञ्जनस्येति सूत्रस्याप्राप्तावनेन हकारस्य धकारो विधीयते । अहणमित्यादिषु अकारात्परस्य माभूदिति प्रथमं पदम् ॥

उदः सश्छो, वा ॥ ३ । ४ । ४ ॥

उदः परस्य सकारस्य छकारो वा स्यात् । उच्छाहो । उच्छयो । पक्षे उस्साहो । उस्सयो ॥

उद इति—उदः सः छ इति पदत्रयं क्रमेण पञ्चम्यन्तं षष्ठ्यन्तं प्रथमान्तञ्च । उद उदुपसर्गादित्यर्थः । उद् + साहो इत्यत्र विशेषविहितत्वान्नित्यकाराःत्राष, सकारस्य छकारस्ततोऽहे व्यञ्जनस्येतिसूत्रेण दकारस्य परसवर्णश्चकारः । एवं उद् + सयो—इत्यत्रापि । पक्षे—छकारस्य वैकल्पिकत्वात्तदभावपक्षेऽहे व्यञ्जनस्येति दकारस्य परसवर्णो सकारः ॥

वर्णानामभावोऽवसानम् ॥ १ । १ । १८ ॥

स्पष्टम् ॥

वर्णानामिति—यदनन्तरं कोऽपि वर्णो नास्ति तादृशः पदस्य वाक्यस्य वाऽन्तोऽवसानमित्युच्यते । संज्ञासूत्रमिदम् । अस्य फलन्तुम्नो नुस्वार इत्यत्रानुपदमेव व्यक्तीभविष्यति ॥

म्नोरऽनुस्वारोऽवसानव्यञ्जनयोः । ३ । ४ । १ ॥

अवसाने व्यञ्जने च परे मकारनकारयोरनुस्वारः स्यात् । निश्रोइउं । संसमरइ । अच्छंति ।

म्नोरनुस्वार इति—म्नोरिति षष्ठीद्विवचनम् । वर्णोपरि बिन्दुरनुस्वार उच्यते । नन्ववसानस्याभावरूपत्वात्परत्वव्यवहारो न स्यादिति चेत्सत्यम् । बुद्धिकृतपरत्वव्यवहारस्य तत्रापि सम्मतत्वात् । निश्रोइउं इत्यवसानस्योदाहरणम् । सम् + सरइ = संसरईति । व्यञ्जनस्योदाहरणम् । अच्छ + न्ति—इत्यत्र तकाररूपव्यञ्जने परे नकारस्यानुस्वारः । अहे व्यञ्जनस्येत्यस्यापवादभूतमिदम् ।

स्वरे वा ॥ ३ । ४ । २ ॥

मकारस्यानुस्वारो वा स्यात्स्वरे परे ।

कुंथुं अरं च । उसभमजिअं च ॥

स्वर इति—म्नोरनुस्वार इति पूर्वसूत्रादनुकृष्यते । क्वचिदेकदेश इति न्यायेन । कुंथुम् + अरं चेत्यत्राकारे परे मकारस्यानुस्वारो जातः । पक्षे कुंथुमरं चेत्यपि । उसभम् + अजिअं चेत्यत्र मकारस्यानुस्वाराभावः प्रदर्शितो वैकल्पिकत्वात्—पक्षेऽनुस्वारोऽपि ॥

तस्य स्पर्शेषु तद्वर्गपञ्चमः । ३ । ४ । ३ ॥

स्पर्शेषु परेष्वनुस्वारस्य परवर्णवर्गस्थः पञ्चमो वर्ण आदेशो वा स्यात् । सङ्कमइ । सञ्चरइ । सण्डीणो । सन्तपइ । सम्पावेइ । पक्षे संकमईत्यादि ॥

तस्येति—तच्छब्दस्य पूर्वपरामर्शकत्वाद्विधीयमानोऽनुस्वारः परामृश्यते । स्पृशन्ति स्वस्वस्थानं स्पष्टतयेति स्पर्शाः कादयो मान्ता वर्णाः पञ्चविंशतिस्तेषु परेष्वित्यर्थः ॥ तद्वर्गेति—द्वितीयतच्छब्देन स्पर्शवर्णः परामृश्यते । तेन स्पर्शरूपपरवर्णो लभ्यते तस्य यो वर्गः कवर्गादिः तत्र स्थितः पञ्चमो वर्णः ङकारादिः सोऽनुस्वारस्यादेशो वा स्यादित्यर्थः । सम्+कमईत्यत्र म्रोरनुस्वार इति सूत्रेणानुस्वारेऽनेनानुस्वारस्य परवर्णवर्गः कवर्गस्तस्य पञ्चमो वर्णः ङकारो जातः । संचरईत्यत्र ञकारः । संडीणो इत्यत्र णकारः संतपईत्यत्र नकारः । संपावेईत्यत्र मकारश्च । पक्षे पञ्चमवर्गादेशाभावेऽनुस्वारस्यानुस्वार एव तिष्ठतीति भावः ॥

अनुस्वारस्य णमि वा ॥ ४ । १ । ३६ ॥

अनुस्वारस्य लोपो वा णमि परे । अहणं । अहण्णं । तेसिणं । तेसिण्णं ॥

अनुस्वारस्येति—लोप इत्यनुवर्त्तते । णमित्यव्ययं वाक्यालंकारे वर्त्तते । अहं+णमित्यत्रानेनानुस्वारलोपे अहणं । लोपाभावे तस्य स्पर्शेष्वित्यनेन वर्गपञ्चमवर्णादेशे अहण्णं । एवं तेसिंणमित्यत्रापि ॥

च्चे जादिभ्य ओः । ३ । ४ । ४५ ॥

जादिशब्देभ्यः परस्य प्रथमैकवचनस्य लोपः स्यात् च्चे परे । जच्चेव । तच्चेव । जीवच्चेव । अजीवच्चेव ।

च्चे इति—लोप इत्यस्यानुवृत्तिः । ओरित्युशब्दस्य षष्ठ्येकवचनम् । उश्च प्रथमैकवचनप्रत्ययः । च्चेत्यव्ययं समुच्चयादौ ज आदिर्येषां ते जादयस्तेभ्यः । ज, त, जीव, अजीव इत्यादयो जादयः । आकृतिगणोऽयम् । ज, उ, च्चेवेत्यत्रोलोपे जच्चेव एवमन्यत्रापि ॥

इति व्यञ्जनसन्धिप्रकरणं समाप्तम्

अथ स्वरविकारप्रकरणम्

इः क्विवणादीनां मध्यस्य स्वरस्य ॥ ३ । ३ । ४२ ॥

क्विवणादिगणपठितानां मध्यस्वरस्येकारो वा । किविणो, किवणो । चरिमं, चरमं ।

पुरिसो, पुरुसो । मुइंगो, मुअंगो ॥

इरिति—बहुलाधिकाराद्विकल्पलाभः । बहुलशब्दस्थाने तदर्थकवाशब्दोपादानेन वैकल्पिकमेवेदमिति लभ्यते । एवमन्यत्रापि । यत्रानेकविधं कार्यं तत्र बहुलमित्येवोच्यते यत्र द्विविधमेवकार्यं तत्र बहुलग्रहणफलितो वा शब्द एव पठ्यते । किवणाचरमपुरुसमुअंगेत्येते किवणादयः ।

सुरभिदुरभ्योर्लोपः । ३ । ३ । ४३ ॥

एतयोर्मध्यस्वरस्य लोपो वा स्यात् । सुब्भि, सुरभिं । दुब्भि, दुरभिं ।

सुरभीति—मध्यस्य स्वरस्येति पूर्वसूत्रादनुकृष्यते । सुरभिदुरभिशब्दयोर्मध्य-स्वरो रेफोत्तरवर्त्यकारः तस्यानेन लोपेऽद्दे व्यञ्जनस्येति सूत्रेण रेफस्य परसवर्णो बकारादेशः तथा च सुब्भिमिति सिद्धमेवं दुब्भिमित्यपि । मध्यस्वरलोपाभावे सुरभिं दुरभिमिति ।

ओस्तंबूलस्य । ३ । ३ । ४४ ॥

तंबूलस्य मध्यस्वरस्यौकारो वा स्यात् । तंबोलं, तंबूलं ॥

ओरिति—मध्यस्य स्वरस्येत्यस्य चानुवृत्तिः ।

कारेल्लस्येयः । ३ । ३ । ४५ ॥

कारेल्लस्य मध्यस्वरस्येयादेशो वा स्यात् कारियल्लं, कारिल्लं, कारेल्लं ॥

कारेल्लस्येति—अत्रापि पूर्ववदनुवृत्तिः । मध्यस्वरोऽत्रैकारस्तस्येयादेशे कारियल्लं । इयादेशाभावे संयुक्त इति सूत्रेण वा ह्रस्वत्वे कारिल्लं । पक्षे कारेल्लमिति ।

अश्चिक्खलादीनाम् । ३ । ३ । ४६ ॥

एषां मध्यस्वरस्याकारो वा स्यात् । चिक्खलं, चिक्खिलं । अगरू, अगुरू ॥

अ इति—पूर्ववदनुवृत्तिः । चिक्खिलशब्दे मध्यस्वर इकारः । अगुरुशब्दे मध्यस्वर उकारः तयोरकारो जातस्तथा च चिक्खलं, अगरु इत्यादिरूपसिद्धिः । चिक्खिलादिराकृतिगणः ।

अद्वेंटगुरुययोः स्वरस्य । ३ । ३ । ७७ ॥

वेंटगुरुयशब्दयोः स्वरस्यादेरकारो वा स्यात् । वंटं, वेंटं । गरुयं, गुरुयं ॥

अदिति—आदेरित्यस्यानुवृत्तत्वान्मध्यस्येति निवृत्तम् । अदिति प्रथमान्तम् । वेंटशब्द आदिस्वर एकारः गुरुयशब्द उकारस्तयोरदित्यकारो जायते वंटं—वृन्तं । गरुयं-गुरुकम् अकाराभावपक्षे वेंटं गुरुयमिति । न च वेंटादीनां व्यञ्जनादित्वात्स्वरादित्वं नास्तीति कथं सूत्रप्रवृत्तिरिति । वाच्यम् आदिशब्दस्यात्र प्रथमवाचकत्वं नत्वावयववाचकत्वं दुर्योधनादयः कौरवा इत्यादौ प्रथमार्थकस्यैव दृष्टत्वात् तथा च वेंटादिशब्दे य आदिस्वरः प्रथमः स्वरः तस्याकारः स्यादिति फलितार्थः ॥

इर्नगिणस्य । ३ । ३ । ७८ ॥

नगिणशब्दस्यादेः स्वरस्येकारो वा स्यात् । निगिणं, नगिणं ॥

इरिति—इरिति प्रथमान्तपदम् । आदेःस्वरस्येत्यनुवृत्तिः ॥ नगिणमिति—नग्नमित्यर्थः आदिस्वरस्याकारस्येकारे जाते निगिणमिति । इकाराभावे नगिणमिति ॥

उउंबरस्य वा । ४ । १ । १६ ॥

अस्यादेः स्वरस्य लोपो वा स्यात् । उंबरो, उउंबरो ॥

उउंबरस्येति— लोपोऽन्यतरस्येति सूत्राल्लोप इत्यनुवर्त्तते आदेः स्वरस्येत्यस्य पूर्ववदनुवृत्तिः । आदिस्वरस्योकारस्य लोप ऊंबर इति रूपम् । लोपाभावे उउंबरो वा उदुंबरो वृक्षविशेषः ॥

ओत्कुतूहलस्य । ३ । ३ । ७६ ॥

कुतूहलशब्दस्यादेः स्वरस्यौद्वा स्यात् । । कोऊहलं, कुऊहलं ।

ओदिति—ओदिति प्रथमान्तमादेशः । अनुवृत्तिः पूर्ववत् लोप इति निवृत्तम् । कुतूहलशब्द आदिस्वर उकारः । तस्यौकारे । तकारस्य 'बहुलंगचे'त्यादिना यकारे लोपे च कोऊहलं । ओकाराभावे कुऊहलमिति ।

ऊतः कुतूहलस्य । ३ । ३ । १२ ।

कुतूहलस्योतो ह्रस्वो वा स्यात् । कोउहलं, कुउहलं ।

ऊत इति—ह्रस्वो वेत्यनयोरनुवृत्तिः । ऊत इत्यनेन दीर्घोकार एव गृह्यते ह्रस्वविधिसामर्थ्यात् । तथा च कुतूहलशब्दान्तर्गततकारोत्तरवर्त्यूकारस्य ह्रस्वत्वे कोउहलं कुउहलं ह्रस्वाभावे दीर्घरूपं तूपरि दर्शितमेव ।

खुड्डस्य के । ३ । २ । ४४ ॥

अस्य दीर्घो वा कप्रत्यये परे खुड्डाकं, खुड्डकं ॥

खुड्डस्येति—दीर्घो वेत्यनयोरनुवृत्तिः । स्वरस्य ह्रस्वदीर्घेत्यादिना स्वरस्योपस्थितिः । अन्त्यस्य षष्ठया इति परिभाषयाऽन्त्यस्वरस्यैव दीर्घः के इति सप्तमीनिर्देशादव्यवहितपूर्वस्यैव दीर्घविधानादकारस्यैव दीर्घो नतूकारस्य खुड्ड (क्षुद्र) शब्दात्स्वार्थे क प्रत्ययस्तथा च खुड्ड + कं इत्यत्राकारस्य दीर्घे खुड्डाकं दीर्घाभावे खुड्डकमिति ॥ ककारस्य विकल्पेन गकारयकारसद्भावे खुड्डागं,खुड्डगं, खुड्डायं खुड्डयमिति रूपचतुष्टयमग्रे साधयिष्यते ॥

वईत ऊत् । ३ । १ । ७६ ॥

वईशब्दस्योकारो वा स्यात् वऊ, वई ॥

वईत इति—तकारउच्चारणार्थः । वईत इति षष्ठ्येकवचनान्तम् । अन्त्यस्य षष्ठ्या इत्यनेनान्त्यस्यादेशः । वईशब्दो वाक्पर्यायः वाणीतियावत् । तस्योकारे जाते वऊ । ऊकाराभावे वईति ॥

विच्छियस्य चस्य मः । ३ । ४ । १२ ॥

अस्य चकारस्य मकारो वा स्यात् । विंछिए ।

विच्छियस्येति—वृश्चिकपर्यायविच्छियशब्दघटकचकारस्य मकारादेशस्तत्राकार उच्चारणार्थः । मकारस्य मोरित्यनुस्वारे विंछिए ।

उसिय्यस्य । ३ । ४ । १३ ॥

विच्छियशब्दस्येयस्योसादेशो वा । विच्छू, विच्छिए ॥

उसिति—विच्छियस्येति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । उसादेशे सकारस्येत्त्वादनेकवर्णसिदित्यनेन सर्वादेशः । तेन विच्छियशब्दघटकेयस्य स्थान उसादेशे विच्छू । उसादेशाभावे विच्छिए ।

आलिसिन्दस्य सेरत् ॥ ३ । ४ । ११ ॥

आलिसिन्दशब्दसम्बन्धिसेरकारोऽन्तादेशो वा आलिसन्दो, आलिसिन्दो ॥

आलीसिन्दस्येति– अन्त्यस्य षष्ठ्या इति परिभाषया सकारोत्तरेकारस्याकारादेश आलिसन्दो । अकारादेशाभावे आलिसिन्दो ॥

॥ इति स्वरविकारप्रकरणम् ॥

अथ व्यञ्जनविकारप्रकरणम् ।

अनादेरसंयुक्तस्य कस्य गः । ३ । ३ । ६१ ॥

असंयुक्तानादिककारस्य गकारो वा स्यात् अहिगरणं, अहियरणं, अहिअरणं, अहिकरणं ।

अनादेरिति किम् । करणम् । असंयुक्तस्य किम् । विकिणइ ।

अनादेरिति—न आदिरादिभूतः सोऽनादिः पदस्यादाववर्त्तमान इत्यर्थः । न संयुक्तो व्यञ्जनान्तरेणेत्यसंयुक्तः पदश्चात्र समस्तमसमस्तमुभयं गृह्यते यत्र समासस्तत्रोत्तरपदापेक्षयादिभूतत्वेपि समस्तपदापेक्षयाऽनादित्वं ग्राह्यं तेनाहिगरणमित्यादौ न दोषः अहि + करणमित्यत्रानेन ककारस्य गकारे अहिगरणं । बहुलं गचेत्यादिना गकारस्य यकारे अहियरणं स्वराद्यस्येति यकारलोपे अहिअरणं । गकारस्य वैकल्पिकत्वाद्गकाराभावे अहिकरणमिति । अनादेरित्यस्य प्रत्युदाहरणं करणमिति असंयुक्तस्य प्रत्युदाहरणं विकिणइति ॥

बहुलं गचजतदबवानां यः । ३ । ३ । ६३ ॥

अनादिभूतासंयुक्तानामेषां यकारो बहुलं स्यात् । जयं, जगं । सोयं, सोचं । आयणं, अजिणं । अवयरणं, अवतरणं । उयरं, उदरं । अलाऊ, अलाबू । जुयलं, जुवलं ॥

बहुलमिति—बाहुलकं चतुर्विधं पूर्वं व्याख्यातमेव ततः क्वचिन्नित्यं यकारः क्वचिद्विकल्पेन क्वचिन्न भवत्येव—गचेत्यादि—गश्च चश्च जश्च तश्च दश्च बश्च वश्च गचजतदबवाः इतरेतरयोगद्वन्द्वः तेषां गचजतदबवानाम् । अनादेरसंयुक्तस्येति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । तस्य बहुवचनान्तत्वेन विपरिणामः विशेष्यस्य बहुवचनान्तत्वात् । गकारादिसप्तवर्णानां विकल्पेन यकारसद्भावे जयं, जगमित्यादीनि सप्तोदाहरणानि क्रमशो दर्शितानि । प्रत्येकं रूपद्वयमुदाहृतम् । स्वराद्यस्येति यकारलोपे तु तृतीयमपि रूपं भवति तत्स्वयमूह्यम् ॥

रुधिरादीनां धभयोर्हो वा । ३ । ३ । ६४ ॥

एषामनाद्यसंयुक्तधकारभकारयोर्हकारो वा स्यात् । रुहिरं, रुधिरं । एहन्तो, एधंन्तो । नहं, नभं ॥

रुधिरादीनामिति—अनादेरसंयुक्तस्येत्येतस्यानुवृत्तिः एकवचनान्तस्य द्विवचनान्तत्वेन विपरिणामेन धभयोर्विशेषणत्वम् अनादेरिति किं ? धम्मो । असंयुक्तस्य किं ? रुध्धो । धकारस्य हकारत्वे रुहिरमित्याद्युदाहरणद्वयम् । भकारस्य हकारत्वे नहमित्याद्युदाहरणम् ॥

नो णः । ३ । ४ । १५ ॥

आदावनादौ च नकारस्य बहुलं णकारः स्यात् । णमंसइ, नमंसइ । णिच्चरइ निच्चरइ । आकण्णइ, आकन्नइ । किण्णं, किन्नं ।

न इति—षष्ठ्यन्तं पदं नकारस्येत्यर्थः । णइतिप्रथमान्तमकार उच्चारणार्थः । णमंसइ इत्यत्र धातावादिभूत नकारस्य णकारः । आकण्णइ इत्यत्रानादिभूतसंयुक्तनकारस्य णकारः णिच्चरइ इत्यत्रोपसर्गस्थादिभूतासंयुक्त नकारस्य णकारः । बहुलग्रहणात् क्वचिद्विकल्पेन क्वचिन्नित्यं यथाप्रयोगं द्रष्टव्यमित्युक्तं प्रागेव ॥

कोडंबादीनां डो लः । ३ । ४ । २२ ॥

कोडंबादिशब्दसंबन्धिडकारस्य लो बहुलं स्यात् । कोलंबो, कोडंबो ।

कोडंबादिष्विति—ड इति षष्ठ्यन्तं पदम् । डकारस्येत्यर्थः ल इतिप्रथमान्तमकार उच्चारणार्थः । बहुलमित्यनुवर्त्तते डकारस्य लकारे कोलंबो । लकाराभावे कोडंबो ॥

पोक्खरादीनां रः । ३ । ४ । २३ ॥

पोक्खरादिशब्दसंबंधिरेफस्य बहुलं लः स्यात् । पोक्खलं, पोक्खरं । पलिहा, परिहा पालयामि ।

पोक्खरादिष्विति—बहुलं ल इत्यनुवर्त्तते । बहुलग्रहणात् पोक्खलमित्यादौ विकल्पेन लः पालयामीत्यादौ नित्यम् । आकृतिगणोयम् ॥

लुक्खादीनां हः । २ । ३ । ८० ॥

एषामुपधाया हकारो वा स्यात् । लूहं, लुक्खं । जीहा, जिब्भा । रिसहो, रिसभो । ककुहं, ककुदं । गाहा, गाथा । बुहो, बुधो । दिवहं, दिवसं । भेसहं, भेसजं । खुहा, खुधा ।

एषामिति—उपधाया वा इत्येतयोरनुवृत्तिः लुक्खजिब्भाशब्दयोरुपधाभूतयोः खकारभकारयोर्हकारे सिस्सादित्वात्संयुक्तस्यादेर्लोपे पूर्वस्य च दीर्घे लूहं जीहा हकारलोपदीर्घाभावे च लुक्खं, जिब्भा । स्वरविशेषवाचकरिसभशब्दे भकारस्य हकारे रिसहो हकाराभावे रिसभो । एवं ककुदादिष्वप्युपधाभूतानां दकारादीनां विकल्पेन हकारे ककुहं ककुदमित्यादि लुक्खं, जिब्भा, रिसभो, ककुदं, गाथा, बुधो, दिवसं, खुधा, भेषजमेते लुक्खादयः आकृतिगणोयम् ॥

आतपादीनां पो वः । ३ । ४ । १६ ॥

एषां पकारस्य वकारादेशो वा स्यात् । आतवो, आतपो । कवोतो, कपोतो । वाहणा, पाहणा । जूवो, जूपो । दुरूवं, दुरूपं । अणुवालयं, अणुपालयं । विवरीयं, विपरीयं । वत्तियं, पत्तियं । पिवीलिका, पिपीलिका ।

आतपादीनामिति—वेत्यनुवर्त्तते । आतपो, कपोतो, पिपीलिका, पाहणा, जूपो, दुरुपं, अणुपालयं, विपरीयं पत्तियमित्येत आतपादयः । आकृतिगणोयम् । अत्रादेर्मध्यस्य वान्त्यस्य पकारस्य विकल्पेन यथाप्रयोगं वकारः । पिपीलिकाशब्दे पकारद्वयमध्ये द्वितीयपकारस्यैव वकारस्तथा प्रयोगदर्शनात् ॥

वा कुतूहलादीनाम् । २ । ३ । ७१ ॥

कुतूहलादीनामुपधाया द्वित्वं वा स्यात् । कोऊहल्लं, कोउहल्लं, कुऊहल्लं, कुउहल्लं पक्षे कोऊहलमित्यादि । दुगुल्लं, दुगूलं, दुकूलं । जुहिट्ठिल्लो, जुहिट्ठिलो ।

वेति—उपधाया द्वित्वमित्यनयोः पूर्वसूत्रादनुवृत्तिः । कुतूहलशब्दस्य विकल्पेन प्रथमोकारस्यौत्त्वेन द्वितीयोकारस्य ह्रस्वत्वेन च रूपचतुष्टयं भवतीति प्राङ् निदर्शितम् । तत्रोपधाभूतस्य लकारस्य विकल्पेन द्वित्वे लद्वयघटितं रूपचतुष्टयमेकलकारघटितं रूपचतुष्टयं च तदुक्तं कोऊहलमित्यादीनि आदिशब्देन कोउहलं, कुऊहलं, कुउहलमिति त्रीणि रूपाणि ज्ञेयानि । दुकूलशब्दे कस्य गकारे लस्य द्वित्वे संयुक्ते ह्रस्वत्वे च दुगुल्लं । द्वित्वाभावे दुगूलं । गत्वाभावे च दुकूलं । जुहिट्ठिल (युधिष्ठिर) शब्दे लस्य द्वित्वे । जुहिट्ठिल्लो । द्वित्वाभावे । जुहिट्ठिलो आकृतिगणोयम् ॥

वज्जादीनां वस्योः । ३ । ४ । १९ ॥

वज्जादिशब्दानां वस्योरादेशो वा स्यात् । आउज्जो, आवज्जो । आउज्जणं, आवज्जणं । उसहो, उसभो, वसहो, वसभो ।

वज्जादीनामिति—इसःसकारस्येत्याद्यनेकवर्णसिदित्यनेन सर्वादेशस्तथा चाकारसहितवकारस्योसादेशः। आवज्जावज्जणयोर्वस्योसादेशे, प्रकृतिभावे च आउज्जो, आउज्जणं आदेशाभावे आवज्जो, आवज्जणं। लुक्खादित्वादुपधाभूतभकारस्य विकल्पेन हकारे वस्योसि च उसहो उसभो। उसादेशाभावे वसहो, वसभो।

वीभत्थस्य च्छो वा। २। ३। ६०॥

अस्योपधायाश्छकारो वा स्यात् वीभच्छो, वीभत्थो।

वीभत्थस्येति—उपधाया वेत्यस्यानुवृत्तिः। उपधाभूतस्य थकारस्य छकारे अहेव्यञ्जनस्ये त्यनेन तकारस्य परसवर्णे वीभच्छो। छकाराभावे वीभत्थो। वीभत्स इत्यर्थः॥

ईतो वीभत्थस्य। ३। ३। १४॥

अस्य ईतो ह्रस्वो वा स्यात्। विभच्छो, विभत्थो।

ईत इति—षष्ठ्येकवचनान्तम्। तकार उच्चारणार्थः। ईतः ईकारस्येत्यर्थः। जेमादीनामित्यतो ह्रस्व इत्यनुवर्त्तते। छकारथकारघटितरूपद्वयस्य ह्रस्वे विभच्छो, विभत्थो इति॥

पुडपुरयोरुत्तरपदयोः। ४। १। १७॥

अनयोरादेर्लोपो वा स्यात्। तालउडं, तालपुडं। गोउरं, गोपुरं॥

पुडेति—आदेर्लोपो वेत्येतेषामनुवृत्तिः। उत्तरपदशब्दस्य समासचरमावयवरूढत्वात् समास उत्तरपदभूतयोः पुडपुरशब्दयोरित्यर्थः॥ आदिभूतपकारस्य लोपे तालउडं। लोपाभावे तालपुडं। एवं गोउरं गोपुरमिति॥

परिवारस्य लः। २। ३। ६४॥

अस्योपधाया लकारो वा स्यात् परिवालो, परिवारो।

परिवारस्येति—वीभत्थस्येत्यत उपधाया इत्यस्यानुवृत्तिः परिवारशब्द उपधाभूतो रकारस्तस्य लकारादेशे परिवालो। आदेशाभावे परिवारो॥

उडजस्य वः। २। ३। ६१॥

अस्योपधाया वकारो वा स्यात्। उडवं, उडयं, उडजं।

उडजस्येति—उपधाया वा इत्येतयोरनुवृत्तिः। उडजशब्द उपधाभूतो जकारस्तस्य वकारे उडवं। वकाराभावे जकारस्य यकारे उडयं। यकाराभावे उडजमिति॥

रिउओः। ३। ३। ७२॥

उउशब्दस्यादेरिरित्यादेशो वा स्यात्। रिऊ उऊ।

रिरिति—रिरितिप्रथमान्तम् । उओरितिषष्ठ्यन्तम् । खेत्तस्यादेरिति सूत्रादादेरित्यनुकृष्यते । आदेरित्यस्य विशेषेणोपादानादन्त्यस्य षष्ठ्या इत्यस्य न प्रवृत्तिः । अनेनादेशे रिऊ । आदेशाभावे उऊ । ऋतुरित्यर्थः ।

उओरन्त्यस्य डुदुयाः । ३ । ४ । ५ ॥

अस्यान्त्यस्य डुदुय इत्येते आदेशाः स्युः उड्ड, उदू, उओ ।

उओरिति—उउशब्दस्य षष्ठ्यैकवचनम् । त्रयाणामादेशानामनेकवर्णत्वादन्त्यस्य षष्ठ्या इति परिभाषां, बाधित्वाऽनेकवर्णसिदित्यनेन, सर्वादेशे प्राप्ते सूत्रेऽन्त्यस्येति, विशेषेणोपात्तं, तत्सामर्थ्यान्न सर्वादेशः, किन्त्वन्त्यस्योकारस्यैव । दुइत्यादेशे उड्ड । डुइत्यादेशे, उदू । यादेशे, स्वरात्यस्येति यलोपेच उओ इति ॥

खेत्तस्यादेश्छः । २ । ३ । ६६ ॥

अस्यादेश्छकारो वा स्यात् । छेत्तं, खेत्तं ।

खेत्तस्येति—वेत्यनुवर्त्तते आदेरित्यस्योपादानादन्त्यस्य षष्ठ्या इति न प्रवर्त्तते । आदिभूतस्य खकारस्य छकारे छेत्तं । छकाराभावे खेत्तमिति ॥

सणियमः सणिम् । ४ । ४ । २८ ॥

सणियं शब्दस्य सणिम्, आदेशो, वा स्याच्चरे परे । सणिंचरो, सणियंचरो ।

सणिमिति—चर इति, पूर्वं सूत्रादनुवर्त्तते । सणियमित्यव्ययम् । शनैरित्यर्थः । सणियं चरति इति विग्रहे सणियमित्यस्य सणिमादेशे मकारस्यानुस्वारे सणिंचरो । आदेशाभावे सणियंचरो ॥

सणियमश्चरश्च्छो वा । २ । ४ । ८७ ॥

अस्मात्परस्य चर्धातोरादेश्च्छकारो वा स्यात् । सणिच्छरो । सणियच्छरो ।

सणियमइति—आदेरित्यस्यानुवृत्तिः । एक देशविकृतमनन्यवदिति सणिमादेशेपि सणियमः परत्वमक्षतम् । आदिभूतस्य चकारस्य च्छकारादेशे त्रयाणामित्यनुस्वारस्य लोपे सणिच्छरो । सणिमादेशाभावे सणियच्छरो ॥

अदसेर्लेसे । ३ । ४ । १७ ॥

असिशब्दस्याकारान्तादेशो वा लेसाशब्दे परे । असलेसा, असिलेसा ।

अदिति—अन्त्यस्य, षष्ठ्या, इत्यनेनासेः, पष्ठ्यन्तत्वादन्तादेशः, असिशब्दघटकेकारस्याकारादेशे असलेसा । अकारादेशाभावे असिलेसा अश्लेषानक्षत्रविशेषः ।

सो द्विः । ३ । ४ । १८ ॥

असेः सकारस्य द्वित्वं वा स्याल्लेसाशब्दे परे अस्सलेसा, असिसलेसा ।

असेरिति—असेर्लेस इति पदद्वयं पूर्वसूत्रादनुकृष्यते । स इति षष्ठ्यन्तं सकारस्येत्यर्थ असिशब्द-

सम्बन्धिसकारस्य न तु लेसाशब्दसम्बन्धिसकारस्य। तथाचानेन सकारस्य द्वित्वे पूर्वसूत्रेणेकारस्याकारादेशे अस्सलेसा द्वित्वाभावेऽकारादेशाभावे च असिलेसा।

इलोरसिलेसयोः। ३। ४। ६६॥

असिलेसाशब्दघटकयोरिकारलकारयोर्वा लोपः। अस्सेसा॥

इलोरिति—वा लोप इति पदद्वयमनुवर्त्तते। असिलेसाशब्दसंबन्धीकारलकारयोर्लोपे अस्सेसा। सकारद्वयघटितरूपस्यैव सूत्रउपादानादेकसकारघटितस्येलोर्न लोपः। इलोर्लोपाभावपक्षे रूपचतुष्टयं तूपदर्शितमेव॥

मिलेच्छस्य खुः। २। ३। ६३॥

मिलेच्छशब्दस्योपधाया खुरादेशो वा स्यात्। मिलेक्खू।

मिलेच्छस्येति—उपधाया वेत्येतदनुवर्त्तते। उपधाभूतस्य छकारस्य खु इत्यादेशेऽवशिष्टस्य चकारस्य परसवर्णत्वे मिलेक्खू।

एतोऽदुतौ। ३। ३। ५१॥

मिलेच्छशब्दसम्बन्धिन एकारस्याकारोकारौ वा स्तः मिलक्खू, मिलुक्खू पक्षे मिलिच्छो, मिलेच्छो।

एतइति—वा मिलेच्छस्येत्यनुवर्त्तते मिलेच्छशब्दघटकेकारस्याकारे खुादेशे परसवर्णे मिलक्खू। एकारस्योकारे मिलुक्खू। अकारोकाराभावे संयुक्ते ह्रस्वत्वे मिलिच्छो। ह्रस्वत्वाभावे मिलेच्छो॥

मेच्छः। ३। ३। ५०॥

मिलेच्छस्य मेच्छादेशो वा स्यात्। मेच्छो, मिच्छो।

मेच्छइति—वा मिलेच्छस्येत्यनुवर्त्तते। मेच्छादेशे सति न खुर्नवाकारोकारौ। संयुक्ते ह्रस्वस्तु भवत्येव। तेन रूपद्वयम् मेच्छो, मिच्छो॥

मत्तिये तोष्टौ। ३। ३। ५८॥

मत्तियाशब्दस्थिततकारद्वयस्य टकारद्वयं वा स्यात् मट्टिया, मत्तिया।

मत्तियइति—तोरिति षष्ठीद्विवचनं तस्य तकारयोरित्यर्थः टाविति प्रथमाद्विवचनं तस्य टकारावित्यर्थः

अहेरत्तस्य ठथौ। २। ३। ६५॥

अहेरुपसर्गात्परस्यात्तस्योपधायाष्ठकारथकारौ पर्यायेण वा स्याताम्। अज्झट्ठं, अज्झत्थं॥

अहेरिति—अहि + अत्तमित्यत्रोपधाभूतस्य द्वितीय तकारस्य ठकारादेशे पूर्वतकारस्य परसवर्णेन टकारे अहि + अट्ठमितिजाते तरहेभ्यश्चजभा इत्यनेन हकारोत्तरवर्त्तीकारस्य भकारे हकारस्य परसवर्णेन जकारे अज्झट्ठं। एवं थकारे अज्झत्थमिति॥

णिच्चे च्चस्य तियः । ३ । ३ । ५७ ॥

णिच्चशब्दघटकस्य च्चस्य तियादेशो वा स्यात् । णिइयं, णितियं, णिच्चं ।

णिच्चइति—आदेशस्यानेकवर्णत्वादकारसहितचकारद्वयस्य स्थाने तियादेशः । तकारस्य यकारे यलोपे च-णिइयं । यकाराभावे णितियं । तियादेशाभावे णिच्चं ॥

गिहस्य गहघरहराः । ३ । ३ । ५५ ॥

एते आदेशाः पर्यायेण वा स्युः । गहं, घरं, हरं, गिहं ॥

गिहस्येति—अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशाः वेत्यनुवर्त्तते ॥

पर्यायेणेति—क्वचिद्‌गहादेशः क्वचिद्‌घरादेशः क्वचिद्धरादेश इत्यर्थः

पज्जाये ज्जायस्य रियागः । ३ । ३ । ५६ ॥

पज्जायशब्दघटकस्य ज्जायस्य रियागादेशो वा स्यात् परियागो, पज्जायो ।

पज्जायइति—अनेकवर्णत्वात्समग्रस्य ज्जायभागस्य रियागादेशे परियागो । यकारस्य लोपे परिआगोपि आदेशाभावे पज्जायो ॥

परिवाट्या डः । २ । ३ । ६६ ॥

परिवाटीशब्दस्योपधाया डकारादेशो वा स्यात् । परिवाडी, परिवाटी ।

परिवाट्याइति—उपधाया वा इत्येतत्पदद्वयमनुवर्त्तते उपधाभूतस्य टकारस्य डकारे परिवाडी । डकाराभावे परिवाटी । बाहुलकाद्वकारस्य न यकारः । ड इत्यत्राकार उच्चारणार्थः ॥

तत्थस्य तहः । ३ ।.३ । ५३ ॥

तत्थस्य तहादेशो वा स्यात् । तहं, तत्थं ।

तत्थस्येति—अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । वेत्यनुवर्त्तते तत्थं सत्यम् ॥

धणोर्हक्क्खङ्कौ । ४ । २ । ४ ॥

धणुशब्दस्य हक्क्खङ् इत्येतावागमौ वा स्तः । धणुहं, धणुक्खं, धणुं ।

धणोरिति—हक्क्खङ्कोः कित्त्वादन्त्यावयवत्वं अवयवावयविभावस्य षष्ठ्यर्थस्य निश्चयात् तथा च हगागमे धणुहं । क्खागमे धणुक्खं । तदभावे धणुं ।

परिहे पः फः । ३ । ४ । १४ ॥

परिहाशब्दघटकपकारस्य फकारो वा स्यात् । फरिहा, परिहा ।

परिहइति—परिहइति सप्तम्यन्तम् । सप्तम्यर्थः घटकत्वम् । प इति षष्ठ्यन्तम् । पकारस्येत्यर्थः । फ इत्यत्राकार उच्चारणार्थः ।

महरट्ठस्य मरहट्ठः । ३ । ३ । ५२ ॥

अस्य मरहट्ठादेशो वा स्यात् । मरहट्ठं, महरट्ठं ।

महरट्ठस्येति—अनेकवर्णत्वात् सर्वादेशः । महाराष्ट्रमित्यर्थः

पउमस्य पोम्मः । ३ । ३ । ५६ ॥

पउमशब्दस्य पोम्मादेशो वा स्यात् । पोम्मं, पउमं ।

पउमस्येति-अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । पोम्ममित्यत्र बाहुल्याद् ह्रस्वो न । पउममित्यत्र प्रकृतिभावान्न सन्धिः ।

यजोर्जः । ३ । ३ । ७३ ॥

यजुशब्दस्यादेर्जकारो वा स्यात् । जजुव्वेदो, यजुव्वेदो ।

यजोरिति—खेत्तस्यादेरिति सूत्रादादेरित्यनुवर्त्तते । आदिभूतस्य यकारस्य जकारे जजुव्वेदो । जकाराभावे यजुव्वेदो ॥

उसिणपसिणयोः सिणस्य ण्हः । ३ । ३ । ६० ॥

अनयोः सिणस्य ण्हादेशो वा स्यात् । उण्हं, उसिणं । पण्हं, पसिणो ।

उसिणेति—अनेकवर्णत्वात्सिणस्यसर्वस्यादेशः । उसिणमित्यत्र सिणस्य ण्हादेशे उण्हं । पक्षे उसिणं । उष्णमित्यर्थः एवं पण्हो, पसिणो । प्रश्न इत्यर्थः ।

नेः कसो घः । २ । ४ । ७४ ॥

नेः परस्य कस्धातोरादेर्घकारो वा स्यात् । निघसो, निकसो ।

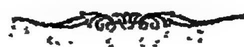
नेरिति—न्युपसर्गादित्यर्थः । कस् आकर्षणे । आदिभूतस्य ककारस्य घकारे निघसो । घकाराभावे निकसो । आदेरित्यस्य खेत्तस्यादेरित्यतोनुवृत्तिः ॥

गिम्हस्य घिंसुः । ३ । ३ । ५४ ॥

अस्य घिंसु इत्यादेशो वा स्यात् । घिंसू, गिम्हो ।

गिम्हस्येति—अनेकवर्णत्वादनेकवर्णसिदित्यनेन सर्वादेशः । सर्वादेशे घिंसू । आदेशाभावे गिम्हो ॥

॥ इति व्यञ्जनविकारप्रकरणम् ॥



अथ विभक्तिप्रकरणम्

तत्र पुंल्लिङ्गशब्दाः

अविभक्ति नाम । १ । १ । २४ ॥

विभक्तिरहितं शब्दस्वरूपं नामसंज्ञं स्यात् ।

अविभक्तीति—विभक्तिश्च सुपत्यादिरित्युक्तं प्राक् । नास्ति, विभक्तिर्यस्य तदविभक्ति-विभक्तिरहितमित्यर्थः विशेषणस्य, नपुंसकत्वात्तदनुरोधेन विशेष्यं शब्दस्वरूपमध्याह्रियते । नचैवं धातोरपि नामत्वं स्यादिति वाच्यम् । सत्यपि नामत्वे तस्मान्न नामविभक्तयो भवन्ति किन्तु निरवकाशत्वात्त्यादय एव प्रत्यया भवन्ति । विभक्तिसहित-स्यापि नामसंज्ञायां विभक्त्यन्तादपि पुनर्विभक्तिप्रत्ययः स्यादित्यत आहाविभक्तीति शब्दस्वरूपं चार्थवदेव नत्वर्थ-शून्यमर्थवद्ग्रहणपरिभाषया तेन घडो पडो इत्यादौ प्रत्येकवर्णस्य घकारादेर्न नामसंज्ञा किन्तु घड इति समुदाय-स्यैव । नामसंज्ञायाः फलन्तु सत्यां नामसंज्ञायां तस्मात् सुब्विभक्तिः ।

उदन्मेदिणेह्यएदणातोदिहिंतोस्साणमिसवः सुप् । १ । १ । २५ ॥

उत् अत्, म इत्, इण इहि, अएत् अण, अतोत् इहिंतो, स्स अण; मि इसु, एते सुप् संज्ञाः स्युः । तत्र उत्; अत् इति प्रथमा । म, इत् इति द्वितीया । इण, इहि इति तृतीया । अएत्, अण इति चतुर्थी । अओत्, इहिंतो इति पंचमी । स्स, अण इति षष्ठी । मि, इसु इति सप्तमी ।

उदिति—उच्च अच्च मश्च इच्च इणश्च इहिश्च अएच्च अणश्च अतोच्च इहिंतोश्च स्सश्च अणश्च मिश्च इसुश्चेति-द्वन्द्वः । उदादावन्त्यतकारोऽसन्देहार्थः । द्वितीयैकवचने मकारेऽकार उच्चारणार्थः । संस्कृतवद्द्विवचनमत्र नास्ति । एकातिरिक्तस्यैव बहुत्वेन बहुवचने तदन्तर्भावाद्द्विवचनस्यानर्थक्यात् । विभक्तयस्तु संस्कृतवत्सप्तैव । तथाच सप्तैकवचनप्रत्ययाः सप्त बहुवचनप्रत्ययास्तेषां सुबिति संज्ञा विधीयतेऽनेनेति ॥

सुपश्च । १ । १ । २३ ॥

सुपः प्रथमादिक्रमेण द्वौ द्वावेकवचनबहुवचनसंज्ञौ स्तः ।

क्रमेणेति—प्रथमादिषु सप्तविभक्तिषु पूर्वोच्चरितमेकवचनसंज्ञं स्यात् पश्चादुच्चरितं बहुवचनसंज्ञं स्यात् यथा उत् अत्, अओतः प्रथमोच्चरितत्वादेकवचनसंज्ञा । अतः पश्चादुच्चरितत्वाद्बहुवचनसंज्ञा । एवं सप्तस्वपि ॥

एकवचनम् । १ । २ । ९ ॥

नाम्न एकवचनं स्यात् ।

एकवचनमिति— अत्रैकत्वविवक्षाया अपेक्षा नास्ति सामान्यतो नाम्नो विधानात् । अतएवाव्ययेभ्यो भावतिङन्तेभ्यश्चैकवचनं भवति ॥

बहुत्वे बहुवचनम् । १ । २ । १० ॥

बहुत्वविवक्षायां बहुवचनं स्यात् ।

बहुत्वइति—एकत्वातिरिक्तमत्र बहुत्वं विवक्षितं तेन द्वित्वस्याप्येकातिरिक्तत्वेन बहुत्वाक्षतिः ।

प्रत्ययः परः । १ । २ । १ ॥

अधिकारोयमाद्वितीयाध्यायद्वितीयपादसमाप्तेः ।

अधिकार इति—अधिकारत्वं च स्वदेशे वाक्यार्थबोधाजनकत्वे सति विधिशास्त्रेण सह वाक्यार्थबोधजनकत्वमित्युक्तमेव प्राक् सूत्रमिदं द्वितीयाध्यायस्य द्वितीयपादसमाप्तिपर्यन्तमनुगच्छति ।

नाम्नः सुप् । १ । २ । ८ ॥

नामसंज्ञकाच्छब्दस्वरूपात्सुप्प्रत्ययाः स्युः । अकारान्तः पुल्लिंगो जिणशब्दः ।

नाम्न इति—पञ्चम्यन्तमिदमधिकृतपरशब्देनान्वेति विभक्तिरहितशब्दस्वरूपस्य नामेतिसंज्ञेत्युक्तमनुपदम् । सुबिति प्रथमान्तं विशेषणमधिकृतेन विशेष्यीभूतप्रत्ययशब्देन युज्यते । प्रत्यय इत्यस्य बहुवचनत्वेन विपरिणामः सुप्प्रत्ययानां बहुत्वात् । नामानि त्रिविधानि पुल्लिङ्गकानि स्त्रीलिङ्गकानि नपुंसकलिङ्गकानि च तत्र पुल्लिङ्गस्य प्राधान्यात्प्रथमन्तान्येवोदाहियन्ते । तत्राप्यकारान्तत्वादिनाऽनेकविधत्वेप्यकारस्य स्वरेषु प्रथमोच्चरितत्वेन प्रथममकारान्तनाम्न उदाहरणत्वेनोपन्यासः तदुक्तमकारान्तः पुल्लिङ्गो जिणशब्दः । जिणो रागद्वेषजेता जिनस्तीर्थंकर इत्यर्थः ।

इदुतः पुंसि । ४ । ३ । २ ॥

अकारान्तपुल्लिंगनाम्नः प्रथमैकवचनस्योकारस्येकारो वा स्यात् । जिणे, जिणो, जिणा । जिणं, जिणे ।

इदिति—अतो नाम्न इत्यनुवर्त्तते, इत् + उतः + पुंसि इति पदत्रयम् । तत्रोत इतिषष्ठ्यन्तम् । विशेषणं तदन्तस्येति परिभाषयाऽकारान्तादिति लाभः पुंस्यनन्तरं वर्त्तमानादिति शेषः । तथाच पुल्लिंगो वर्त्तमानादकारान्तनाम्न इत्यर्थः । जिण + उ इति स्थितेऽनेनोकारस्येकारे वृद्धिरूपे परसवर्णे जिणे । इकाराभावे वृद्धिरूपे परसवर्णे जिणो । जिण + अ इति स्थितेऽदिदुतः सवर्णे इति दीर्घे जिणा । जिण + म् इति स्थिते म्रोरित्यनुस्वारे जिणं । जिण + इ इति स्थितेऽतः स्वर इत्यनेन परसवर्णे जिणे ॥

इणाणेहीसीसूनां । ४ । २ । १४ ॥

एषां ममागमो वा स्यात् । जिणेणं, जिणेण । जिणेहिं, जिणेहि ।

इणेति—इणश्च अणश्च इहिश्च इसिश्च इसुश्चेति द्वन्द्वः । इणादयः पञ्च सुप्प्रत्ययाः । तत्रेणेति तृतीयैकवचनम् । अणेति षष्ठीबहुवचनम् । इहीति तृतीयाबहुवचनम् । इसीति सव्वणामोत्तरषष्ठीबहुवचनम् । इसु इति सप्तमीबहुवचनम् । मम् वा इति पदद्वयं पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । जिण+इणेति तृतीयैकवचनेऽनेन ममागमे तस्य चान्त्यस्वरात्परत्वे मकारस्यानुस्वारेऽकारेकारयोः परसवर्णे जिणेणं । ममागमाभावे जिणेण । एवं तृतीयाबहुवचने जिणेहिं जिणेहि इतिरूपद्वयम् ॥

अएतः स्सो नाम्नः । ४ । ३ । ३० ॥

नाम्नः परस्य चतुर्थ्येकवचनस्य स्सादेशो वाऽस्त्रियाम् । जिणस्स, जिणाए । जिणाणं, जिणाण ।

अएत इति—वा स्त्रियामिति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । अएत इति षष्ठ्यन्तम् । नाम्न इति पञ्चम्यन्तम् । अएदिति चतुर्थ्येकवचनप्रत्ययस्तत्र तकार उच्चारणार्थः । जिण + अए इत्यत्रानेन स्सादेशे जिणस्स । स्सादेशाभावे जिणाए । जिण + अणेत्यत्र ममागमे सवर्णदीर्घेऽनुस्वारे जिणाणं । ममागमाभावे जिणाण ॥

अतोऽएदत्तोतोरयाही क्वचित् । ४ । ३ । ३१ ॥

अकारान्तान्नाम्नः परयोश्चतुर्थीपञ्चम्येकवचनयोः क्रमेणायाही आदेशौ स्तः क्वचिदस्त्रियाम् । जिणाय । जिणाहि ।

अत इति—विशेषणं तदन्तस्येति परिभाषयाऽत इत्यस्याकारान्तादिति लाभः । वा स्त्रियां नाम्न इत्यस्यानुवृत्तिः । समानां स्थान्यादेशादीनां यथासंख्यं स्यादिति न्यायादएतः अयादेशः अतोतः अह्यादेशः स्यादित्यर्थः । एतावादेशौ न सर्वत्र भवतः किन्तु क्वचिदेव शास्त्रे तथाप्रयोगदर्शनादुक्तं क्वचिदिति । अनेकवर्णत्वात् सर्वादेशः । जिण + अए इति स्थितेऽनेनायादेशे सवर्णदीर्घे जिणाय । जिण + अतोत् इति स्थितेऽतोतः अह्यादेशे सवर्णदीर्घे जिणाहि । अस्त्रियामित्यनुवर्त्तते स्त्रीभिन्ने पुंसि क्लीबे चेति तदर्थः ।

अतोतोऽन्तः । ३ । ४ । ६१ ॥

अकारान्तान्नाम्नः परस्य पञ्चम्येकवचनस्यातोतोऽन्त्यस्य लोपो वा स्यात् । जिणा, जिणाओ । जिणेहिंतो । जिणस्स । जिणाणं, जिणाण ।

अतोत इति—अन्त्यस्य षष्ठ्या इति परिभाषयाऽन्त्यस्येति लाभः । अत इत्यस्य विशेषणत्वाद्विशेषणं तदन्तस्येत्यनयाऽकारान्तादिति लाभः । लोपो वेति पदद्वयमनुकृष्यते । जिण + अतोदितिस्थितेऽनेनान्त्यस्यौकारस्य लोपे तकारस्य यकारे तस्य लोपे सवर्णदीर्घे च जिणा । लोपाभावे च जिणाओ । क्वचिज्जिणाहि इत्युक्त-

ेवानुपदम्। पञ्चमीबहुवचने जिण + इहिंतो इत्यत्र परसवर्णे जिणेहिंतो। षष्ठ्या एकवचने किञ्चिद्विकारा-भावादेकमेव रूपम्। बहुवचने तु ममागमविकल्पेन जिणाणं जिणाणेति रूपद्वयम्॥

सिः। ४। ३। ३२॥

नाम्नः परस्य सप्तम्येकवचनस्य मेः स्यादेशो वा स्यादस्त्रियाम्।

सिरिति—नाम्नः मेः अस्त्रियां वेति पदचतुष्टयं पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते। अनेकवर्णत्वात् संपूर्णस्य मेः स्थाने सिरित्यादेशः। अस्त्रियामित्यस्य पुंसि क्लीबे चेत्यर्थः।

मौ व्यञ्जनादौ नाम्नः। ४। २। १८॥

व्यञ्जनादौ सप्तम्येकवचने परे नाम्नो ममागमः स्यात्। जिणंसि, जिणंमि।

माविति—ममिति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते। माविति सप्तम्यन्तम्। व्यञ्जनादाविति तद्विशेषणम्। व्यञ्जनमादिर्यस्येति बहुव्रीहिः। यदा मेरिसादेशस्तदा व्यञ्जनादित्वं नास्तीति तन्निवृत्त्यर्थं व्यञ्जनादाविति स्त्रीलिंगेऽपि मेर्व्यञ्जनादित्वाभावात्तन्निवृत्तिः। स्वराणामन्त्यादिति परिभाषया नाम्नोऽन्त्यस्वरात्परो ममागमः। ममि मकारो मित्कार्यार्थः। अकार उच्चारणार्थः। अवशिष्टस्य मकारस्य म्नोरित्यनेनानुस्वारः। जिण + मि इत्यत्र मेः स्यादेशे ममागमे जिणंसि। स्यादेशाभावेऽप्यनेन ममागमे जिणंमि स्यादेशे मिपरत्वं नास्तीति न शङ्क्यं यदादेशस्तद्वद्भवतीति न्यायात्स्यादेशोपि मिवद्भवतीति न ममागमे बाधः।

मेरिरतो नाम्नो वा। ४। ३। १॥

अकारान्तान्नाम्नः परस्य सप्तम्येकवचनस्य मेरिसादेशो वा स्यात्। जिणे। जिणेसुं, जिणेसु।

मेरिति—सित्त्वात्सर्वादेशः जिण + मि इति स्थितेऽनेन मेरिसादेशे परसवर्णे जिणे इति सिद्धम्। जिण + इसु इति स्थिते इणाणेहीत्यनेन ममागमेऽनुस्वारे परसवर्णे च जिणेसुं। ममभावे जिणेसु।

अत्पुंसि वातः। ४। ३। ६॥

अकारान्तान्नाम्नः परस्यामन्त्रणार्थकप्रथमैकवचनस्योतोऽद्वा स्यात्पुंसि। भो जिणा, भो जिणे। भो जिणो। भो जिणा। एवं गोयमप्रभृतयः।

अदिति—नाम्नः आमन्त्रणे उतः इति पदत्रयमनुवर्त्तते आमन्त्रण इति सप्तम्यन्तपदस्यानुवृत्तेनोत इत्यनेन सहान्वयः। सप्तम्यर्थो वाचकत्वं। आमन्त्रणं चेह स्वाभिमुखीकरणं। सम्बोधनमिति यावत्। नपुंसकलिंगनिवृत्त्यर्थं पुंसीति। जिण + उ इति स्थितेऽनेनोकारस्याकारे सवर्णदीर्घे जिणा। तदभावे इकारादेशे परसवर्णे जिणे। आदेशाभावे परसवर्णे भो जिणो। जिण + अदिति बहुवचने सवर्णदीर्घे भो जिणा।

अट्टादएतोऽः । ४ । ३ । ६५ ॥

अट्टशब्दात्परस्याएत्प्रत्ययस्यासादेशो वा स्यात् । अट्टा, अट्टस्स, अट्टाए । शेषं जिणवत् ।

अट्टादिति—वेत्यनुवर्त्तते । सित्त्वात्सर्वादेशः । अट्ट + अएदिति चतुर्थ्येकवचनेऽनेनासादेशे सवर्णदीर्घे अट्टा । पक्षे स्सादेशे अट्टस्स । तदभावे सवर्णदीर्घे अट्टाए ॥

न्तस्य सोन्मस्य मः । ४ । ३ । ४८ ॥

प्रथमाद्वितीयैकवचनसहितस्य न्तमन्तसम्बन्धिन्तस्य वा म आदेशः स्यात् । भगवं, भगवन्ते, भगवन्तो । भगवं, भगवन्तं । मतिमं, मतिमन्ते, मतिमन्तो । मतिमं, मतिमन्तं । एवं कारयं कारयन्ते कारयन्तो इत्यादि ।

न्तस्येति—न्तमन्तयोरिति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । उश्च मश्च उन्मौ ताभ्यां सहितः सोन्मः तस्य । उदिति प्रथमैकवचनप्रत्ययः । म इति द्वितीयैकवचनप्रत्ययः । आदेशे सकारस्येत्त्वाद्विभक्तिप्रत्ययसहितस्य न्तस्य स्थाने मादेशः । अकार उच्चारणार्थः मकारः शिष्यते तस्य म्ोरित्यनेनानुस्वारः । अन्तादिशब्देषु न्तस्यादेशो माभूदिति न्तमन्तयोरिति न्तो वर्त्तमानार्थकक्रुत्प्रत्ययः । मन्तश्च सम्बन्धार्थकतद्धितप्रत्ययो बोध्यः । भगवन्त + उदिति स्थिते मादेशेऽनुस्वारे भगवं । मादेशाभावे उत इकारादेशे परसवर्णे भगवन्ते । इकारादेशाभावे परसवर्णे भगवन्तो । एवं प्रथमैकवचने रूपत्रयम् । गकारस्य यकारे तु रूपषट्कम् । द्वितीयैकवचने मसादेशे भगवं । मसादेशाभावे भगवन्तं एवं मतिममित्यादीनि । ननु न्तस्य मन्तसम्बन्धित्वेपि न्तसम्बन्धित्वं कथं ? स्वस्मिन्स्वसम्बन्धित्वाभावादिति चेन्न लौकिकन्यायात् व्यपदेशिवद्भावात्स्वस्मिन्नपि स्वसम्बन्धित्वं विशिष्टोऽपदेशः—मुख्यव्यवहारो व्यपदेशः सोऽस्यास्तीति व्यपदेशी यथा मन्तघटको न्तशब्दः तत्र सम्बन्धित्वस्य मुख्यव्यवहारात् । तेन तुल्यं तद्वत् तद्भावात् । यथा मन्तशब्दे मुख्यसम्बन्धित्वव्यवहारस्तथा केवलन्तशब्देपि व्यवहारो भवतीत्यदोषः ।

न्तमन्तयोन्तौत् । ४ । ३ । ४६ ॥

न्तमन्तसम्बन्धिन्तात्परयोः प्रथमाद्वितीयाबहुवचनयोरुकारादेशो वा स्यात् । भगवन्तो, भगवन्ता । भगवन्तो, भगवन्ते । मतिमन्तो, मतिमन्ता । मतिमन्तो, मतिमन्ते ।

न्तमन्तयोरिति—अदितोरुर्वेति पदद्वयमनुवर्त्तते । अदितिप्रथमाबहुवचनप्रत्ययः । इदिति द्वितीयाबहुवचनप्रत्ययः । अत्र इत्त्वादितौ तयोः । तकार उच्चारणार्थः । भगवन्त + अ इति स्थितेऽनेनाकारस्योकारे परसवर्णे भगवन्तो । उकाराभावे सवर्णदीर्घे भगवन्ता । द्वितीयाबहुवचने भगवन्त + इ इति स्थिते इकारस्योकारादेशे परसवर्णे भगवन्तो । उकारादेशाभावे परसवर्णे भगवन्ते । एवं मतिमन्तो इत्यादीनि ।

इणस्सयोरसुसौ । ४ । २ । ४७ ॥

न्तमन्तसम्बन्धिन्तात्परयोः तृतीयाषष्ठ्येकवचनयोः क्रमेणासुसादेशौ स्तः ।

इणेति—न्तमन्तयोर्न्तादित्यनुवर्त्तते । इणश्च स्सश्चेति द्वन्द्वः । यथासंख्यमिणस्यास् स्सस्य चोसादेशः

न्तस्यासुसोः । ४ । १ । १० ॥

अस्यादेर्लोपः स्यादसुसोः परयोः । भगवता, भगवया । भगवतो, भगवओ । मतिमता, मतिमतो ।

न्तस्येति—आदेर्लोप इतिपदद्वयमनुवर्त्तते । प्रत्ययाप्रत्यययोरितिपरिभाषया न्तमन्तप्रत्ययस्यैवग्रहणम् । तेनान्तादिशब्दघटको न्तो न गृह्यते । न्तस्यादिर्नकारस्तस्य लोप इत्यर्थः । भगवन्त+इणेति स्थितेऽसादेशेऽनेन नकारलोपे सवर्णदीर्घे भगवता । तकारस्य यकारे भगवया । भगवन्त+स्स इत्यत्रोसादेशे न लोपे परसवर्णे भगवतो । तकारस्य यकारे लोपे च भगवओ एवं मतिमतेत्यादि ।

इह्यएदन्ओदिर्हितोऽणेषु न्तस्य । ४ । १ । २५ ॥

एषु परेषु न्तस्यादेर्लोपो वा स्यात् । भगवएहिं, भगवंतेहिं । भगवयाए, भगवंताए । भगवया, भगवयाओ, भगवंता, भगवंताओ । भगवएहिंतो, भगवंतेहिंतो । भगवयाणं भगवंताणं । शेषं जिणवत् ।

इह्येति—आदेर्लोपो वेत्यनुवर्त्तते । इहिश्च अएच्च अओच इर्हितोश्चाणश्चेतीतरेतरयोगद्वन्द्वः । भगवन्त इहिमित्यत्र न्तस्यादेर्नकारस्य लोपे तकारस्य यकारे लोपे भगवएहिं । पक्षे भगवन्तेहिं । चतुर्थ्येकवचने, भगवयाए भगवन्ताए । पञ्चम्यां भगवया, भगवयाओ, भगवन्ता, भगवन्ताओ । षष्ठीबहुवचने भगवयाणं, भगवन्ताणमित्यादि । शेषं—सप्तम्येकवचनादिकं जिणशब्दवत् ॥

सादिदणस्य भवंतस्य भे वा । ४ । २ । २३ ॥

प्रथमाद्वितीयाषष्ठीबहुवचनसहितस्य भवंतस्य भे वा स्यात् । भे । भवंतो, भवंता । भवंते, भवंताणं ।

सादिदणस्येति—अश्च इश्च अणश्चेति द्वन्द्वः । तैः सहितः सादिदणस्तस्य । अदिति इदिति अणेति च क्रमेण प्रथमाद्वितीयाषष्ठीबहुवचनानि । स्थलत्रयेप्यनेन भे इत्यादेशे भे । पक्षे भवन्तो भवन्ते इत्यादीनि रूपाणि

सोत्तोरस्य तारस्य । ३ । ४ । ६७ ॥

तारप्रत्ययसम्बन्धिनो रस्य प्रथमैकवचनसहितस्य वा लोपः स्यात् । कत्ता, कत्तारे, कत्तारो । पसत्था, पसत्थारे, पसत्थारो ।

सोतइति—उतासहितस्येति समासः वा लोप इति पदद्वयमनुवर्त्तते। कर्त्तरि ताराकणाविति सूत्रेण जायमानस्य कर्त्रर्थकतारप्रत्ययस्यात्र ग्रहणं प्रत्ययाऽप्रत्यययोर्मध्ये प्रत्ययस्य ग्रहणमिति परिभाषया। तेन समवतार इत्यादिस्थले नातिप्रसङ्गः। एकदेशविकृतमनन्यवदिति परिभाषाश्रयणेन पसत्थारशब्दे थारस्यापि तारत्वमक्षतम्। कत्तार + उदित्यत्र प्रत्ययसहितस्य रस्य लोपे कत्ता। लोपाभावपक्षे कत्तारे, कत्तारो। पसत्था इति—प्रपूर्वकसस्धातोस्तारप्रत्यये तकारस्य थकारे सकारस्य परसवर्णे पसत्थार इति सिद्धम्। पसत्थार + उदित्यत्र सोतोरस्य लोपे पसत्था। पक्षे पसत्थारे, पसत्थारो इति॥

उस्ताराद्वा। ४। ३। ४५॥

तारप्रत्ययान्तात्परयोः प्रथमाद्वितीयाबहुवचनयोरुकारादेशो वा स्यात्। कत्तारो, कत्तारा। कत्तारं। कत्तारो, कत्तारे। एवं पसत्थारो, भत्तारो इत्यादि।

उरिति—अदितोरुर्वेति पदत्रयं पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते। कत्तार + अदित्यत्र प्रथमाबहुवचनस्योकारादेशे वृद्धौच कत्तारो। आदेशाभावे परसवर्णे कत्तारा। कत्तारमिति—द्वितीयैकवचनान्तमिदम्। कत्तार + इदित्यत्रानेनोकारादेशे कत्तारो। पक्षे वृद्धौ कत्तारे। एवमिति—पसत्थारो, पसत्थारा। पसत्थारं। पसत्थारो, पसत्थारे। भत्तारो, भत्तारा। भत्तारं। भत्तारो, भत्तारे इत्यादीनि रूपाणि कत्तारवद्बोध्यानि॥

उस्तारस्यारस्य तृतीयादौ वा॥ ४। ३। १६॥

तारप्रत्ययसम्बन्धिन आरस्योसादेशो वा स्यात्तृतीयादिषु परेषु।

उस्तारस्येति—वेत्यनुवर्त्तते। सित्त्वात्सर्वादेशः।

अस्त्रियामिणस्य णाः। ४। ३। ५२॥

इदुद्भ्यां परस्येणप्रत्ययस्य णादेशः स्यादस्त्रियाम्। कत्तुणा। पसत्थुणा। भत्तुणा। पक्षे कत्तारेणं। पसत्थारेणं। भत्तारेणं।

इणस्येति—इदुद्भ्यामित्यनुवर्त्तते। कत्तार + इणेत्यत्रारभागस्योकारे जातेऽनेनेणप्रत्ययस्य णादेशे कत्तुणा। उकाराभावे कत्तारेण। ममागमे कत्तारेणं। एवं पसत्थुणा। पसत्थारेण, पसत्थारेणं। भत्तुणा। भत्तारेण, भत्तारेणं। उसादेशपक्षे शेषं साहुवत्। उसादेशाभावे जिणवदिति। आमन्त्रणे तु विशेषस्तमेव दर्शयति

उतोऽत्तारादारस्यामन्त्रणे॥ ३। ४। ४२॥

तारप्रत्ययान्तान्नाम्नः परस्यामन्त्रणोतोऽकारादेशः स्यादारस्य लोपश्च। हे कत्त! हे भत्त! हे पसत्थ! पक्षे जिणवत्।

उतइति—प्रत्ययग्रहणे यस्मात्स विहितस्तदादेस्तदन्तस्य ग्रहणमिति परिभाषया प्रत्ययान्तादिति लाभः।

लोप इत्यस्यानुवृत्तिः। कत्तार + उ इति स्थितेऽनेनोकारस्याकारादेशे आरभागस्य च लोपे कत्त इति। एवं भत्त इत्यादि। अन्त्यस्य षष्ठ्या इत्यनेनान्त्यस्य लोपो न भवति आरस्येति विशेषोपादानादुक्तपरिभाषया अत्राप्रवृत्तेः। किन्तु सर्वस्यैव।

ओरायादिभ्यः। ४। ३। १५॥

एभ्यः परस्य प्रथमाया एकवचनस्याकारादेशः स्यात्। राया। अप्पा। अत्ता।

अ इति—ओ इति प्रथमान्तम्। उत इत्यनुवर्त्तते। आदिशब्देनाप्पादयो गृह्यन्ते। राय + उदित्यत्रानेनाकारादेशे सवर्णदीर्घे राया। एव मप्पादयः

रायादिभ्यो डम्। ४। ३। १३॥

एभ्यः परस्यामन्त्रणैकवचनस्य डमादेशः स्यात्।

रायादिभ्य इति—उत आमन्त्रण इति चानुवर्त्तते। वर्त्तमानस्येति शेषः आमन्त्रणे वर्त्तमानस्य प्रथमैकवचनस्येत्यर्थः। हे राय + उदित्यत्रानेनोतो डमादेशो भवति।

डिति टेः। ४। १। २६॥

डिति परे टेर्लोपः स्यात्। हे रायं।

डितीति—लोप इत्यनुवर्त्तते। टिसंज्ञा समाख्याता पूर्वम्। डमादेशे सति तस्मिन्नतो लोपे हे रायं। अत एव न दीर्घः।

अणो रायादिभ्यः। ४। ३। ३७॥

रायादिभ्यः परयोः प्रथमाद्वितीययोर्बहुवचनयोरणो इत्यादेशः स्यात्। रायाणो।

अदितोरिति—अदितोरित्यस्यानुवृत्तिः। अश्च इश्च अदितौ तयोः। अणोरिति प्रथमैकवचनान्तम्। राय + अदित्यत्रानेनाणवादेशे सवर्णदीर्घे रायाणो। द्वितीयाबहुवचनेपि रायाणो।

मोऽणड्रायादिभ्यो वा। ४। ३। ६५॥

रायादिभ्यः परस्य मप्रत्ययस्याणडागमो वा स्यात्। रायाणं, रायं।

म इति—म इति षष्ठ्यन्तम्। अणडिति प्रथमान्तम्। राय + म् इत्यत्रटित्वान्मकारस्यादावणडागमे सवर्णदीर्घे मोनुस्वारे रायाणं। आगमाभावे रायं।

सेणस्य। ४। ३। १६॥

तृतीयैकवचनसहितस्य रायशब्दस्य रन्नेत्यादेशः स्यात्। रन्ना।

रायस्येति—अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः। क्वचिदेकदेशन्यायेन सेणस्येति विशेषणबलाच्च रायशब्दमात्रानुवृत्तेर्विशेषणानुरूपविभक्तिविपरिणामाच्च वृत्तौ रायशब्दस्येत्युक्तम्।

इह्यणयोरिः । ४ । ३ । १७ ॥

रायशब्दस्येकारोऽन्तादेशः स्यादिह्यणयोः परयोः । राईहि, राईहिं ।

इहीति—रायस्येत्यनुवर्त्तते । अन्त्यस्य षष्ठ्या इत्यनेनान्त्यादेशः । राय + इहि—अत्र यकारोत्तराकारस्येकारादेशे यलोपे सवर्णदीर्घे राईहि । ममागमे राईहिं ।

सस्सस्य रन्नोः । ४ । ३ । १८ ॥

षष्ठ्येकवचनसहितस्य रायशब्दस्य रन्नो इत्यादेशः स्यात् । रन्नो । राईण, राईणं । शेषं जिणवत् ।

सस्सस्येति—रायस्येत्यस्यानुवृत्तिः । स्सेन सहितः सस्सस्तस्य । रन्नोरिति प्रथमैकवचनान्तम् । राय + स्सेत्यत्रानेनादेशे रन्नो । राय + अणेत्यत्राकारस्येकारादेशे यलोपे सवर्णदीर्घे राईण । ममागमे राईणं । पंचमीसप्तम्यादिषु जिणवद्रूपाणि बोध्यानि ॥

अत्ताप्पाभ्याम् । ४ । ३ । ५३ ॥

आभ्यां परस्येणप्रत्ययस्य णा इत्यादेशः स्यात् । अत्तणा । अप्पणा ।

अत्तेति—इणस्य णेत्यस्यानुवृत्तिः । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । अत्ताप्पशब्दावात्मवाचकौ । तद्रूपाणि प्रथमाद्वितीययो रायवद्भवन्ति—तृतीयैकवचनेऽनेन णादेशे अत्तणा, अप्पणा ।

स्सस्य णोः । ४ । ३ । ५४ ॥

आभ्यां परस्य स्सप्रत्ययस्य णो इत्यादेशः स्यात् । अत्तणो । अप्पणो । शेषं जिणवत् ।

सस्सस्येति—अत्ताप्पाभ्यामिति पूर्वसूत्रादनुवर्त्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । चतुर्थीषष्ठ्येकवचनेऽनेन णो इत्यादेशे अत्तणो । अप्पणो । अन्यानि रूपाणि जिणशब्दवज्ज्ञेयानि ।

इणातोत्स्सेषु जसादीनां सक् । ४ । ३ । ६६ ॥

एषु परेषु जसादीनां सगागमो वा स्यात् ।

इणेति—वेत्यनुवर्त्तते । जस, मण, वय, काय, तेय, चक्खु, जोग, एते जसादयः । कित्वादन्त्यावयवः तेन जसादीनां सान्तत्वं निष्पद्यते ।

सान्तादिणस्याः । ४ । ३ । ५५ ॥

सकारान्तान्नाम्नः परस्येणप्रत्ययस्यासादेशः स्यात् । जससा । मणसा । वयसा । कायसा । तेयसा । चक्खुसा । जोगसा ।

सान्तादिति—सान्तादिति पञ्चम्यन्तं विशेषणम् । नाम्न इति विशेष्येण तदन्वयः । आसादेशे सकार इत्संज्ञकस्तेन सित्वात्सर्वादेशः । जसादीनां सगागमेन सान्तत्वे निष्पन्नेऽनेनेणस्यासादेशे जससा, मणसा,

वयसा इत्यादि । सगागमाभावे तु जसेण, मणेण, वएण, काएण इत्यादि ।

अतोत्ससयोरो । ४ । ३ । ५६ ॥

सकारान्तान्नाम्नः परयोरतोत्ससयोरोसादेशः स्यात् । जससो । मणसो । वयसो । कायसो । तेयसो । चक्खुसो । जोगसो ।

अतोदिति—सान्तादित्यस्यानुवृत्तिः । अतोच ससश्च अतोत्ससौ तयोः । सित्त्वात्सर्वादेशः । जसादीनां सगागमे सति सान्तत्वेऽस्य सूत्रस्य प्रवृत्तिः । पञ्चमीषष्ठ्येकवचनयोरोत्वे जससो, मणसो इत्यादि । सगागमाभावे जसस्स । मणस्स । वयस्स इत्यादि । मण + मि इत्यत्र मेरादेरित्यनेन मकारस्य सकारे मौ व्यञ्जनादाविति ममागमे मणंसि । ममागमस्य बाहुल्येन कचित्तदभावे मणसि । सकाराभावे ममागमे मणंमि ॥

कम्मधम्मयोरुः । ४ । ३ । ६७ ॥

एतयोरुकारादेशो वा स्यादिणप्रत्यये परे । कम्मुणा । धम्मुणा । शेषं जिणवत् ।

कम्मधम्मयोरिति—इणो वेति पदद्वयानुवृत्तिः । अन्त्यस्य षष्ठ्येति परिभाषयाऽन्त्यादेशः । एतयोः—कम्मधम्मशब्दयोः । उकारादेशे सतीणस्य णेत्यनेन णादेशे कम्मुणा । धम्मुणा । पक्षे कम्मेण । धम्मेण तृतीयैकवचनं विनाऽन्यत्र जिणशब्दवद्रूपाणि ज्ञेयानि ।

इकारान्तः पुल्लिंगो मुणिशब्दः ।

आदिदुद्भ्यः स्वरे सुपि पूर्वस्य । ३ । २ । ३२ ।

आकारादिकारादुकाराच्च स्वरादौ सुपि परे पूर्वपरयोः पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः स्यात् । मुणी

आदिदुद्भ्य इति—पूर्वपरयोः सवर्णः दीर्घ इत्येतत्पदत्रयमनुवर्त्तते । सवर्णे स्वरेऽदित इति सूत्रेण दीर्घे सिद्धेप्यसवर्णस्वरादौ सुपि दीर्घविधानार्थमिदं सूत्रम् । तथा च सवर्णे सुप्यप्यनेनैव दीर्घो विशेषविहितत्वात् ।आच्च इच्च उच्च दिदुतस्तेभ्यः । स्वरे सुपीति सप्तम्यन्तं वर्णविधौ तदादाविति परिभाषया स्वरादाविति लाभः । मुणि + उदित्यत्रानेनेकारोकारयोः पूर्वसवर्णदीर्घैकादेशे मुणी ।

इदुद्भ्यां णोरदितोः । ४ । ३ । ४६ ॥

इदुद्भ्यां परयोः प्रथमाद्वितीयाबहुवचनयोर्णो इत्यादेशो वा स्यात्पुंसि । मुणिणो, मुणी । मुणिं । मुणिणो, मुणी । मुणिणा । मुणीहिं, मुणीहि ।

इदुद्भ्यामिति—पुंसि वेति पदद्वयस्यानुवृत्तिः । मुणि + अ इत्यत्रानेन णो इत्यादेशे मुणिणो । आदेशाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे मुणी । एवमत्रेपि ॥ मुणि + इणेत्यत्र इणस्य णेत्यनेन णादेशे मुणिणा । मुणि + इहि—अत्र सवर्णदीर्घे ममागमे च मुणीहिं । ममागमाभावे मुणीहि ॥

अएदत्तोत्ससानामस्त्रियाम् । ४ । ३ । ५० ॥

इदुद्भ्यां परेषामेषां णो इत्यादेशो वा स्यादस्त्रियाम् । मुणिणो, मुणिस्स, मुणीए । मुणीणं,

मुणीण । मुणिणो, मुणीओ । मुणीहिन्तो । मुणिणो, मुणिस्स । मुणीणं । मुणिसि, मुणिम्मि, मुणीसु ॥

अएदिति—इदुद्भ्याम्, णो, वेति पदत्रयस्यानुवृत्तिः । अएच्च अतोच्च स्सश्च अएदतोस्सास्तेषामिति विग्रहः । मुणि + अए इत्यत्रानेन णो इत्यादेशे मुणिणो पक्षे अएतः स्स इति स्सादेशे मुणिस्स पक्षे आदिदुद्भ्य—इत्यादिना पूर्वसवर्णदीर्घे मुणीए इति रूपं भवति । मुणि + अण इत्यत्र 'आदिदुद्भ्य' इत्यादिना पूर्वसवर्णदीर्घे इणाणोर्ङीसीसूनामित्यनेन वैकल्पिके ममागमे मुणीणं; ममागमाभावे मुणीण । मुणि + अओत् अत्रानेन णो इत्यादेशे मुणिणो; पक्षे अकारस्य पूर्वसवर्णदीर्घादेशे प्रकृतिभावे मुणीओ । मुणि + इहिंतो अत्रादिदुतः इति सूत्रं प्रबाध्य पूर्वसवर्णदीर्घे मुणीहिन्तो । मुणि + स्स इत्यत्रानेन सूत्रेण णो इत्यादेशे मुणिणो; पक्षे मुणिस्स । मुणीणं पूर्ववत् । मुणि + मि इत्यत्र सिरिति स्यादेशे मौ व्यञ्जनादौ नाम्न इत्यनेन ममागमे मुणिंसि; स्यादेशाभावे मुणिम्मि । मुणि + इसु अत्र सवर्णदीर्घे मुणीसु ।

इदुद्भ्यामामन्त्रण उतः । ३ । ४ । ६८ ॥

इकारोकाराभ्यां परस्यामन्त्रणैकवचनस्य लोपो वा स्यात् । भो ! मुणि !! मुणी । मुणिणो, मुणी । एवं तवस्सिगिरिजलहिप्रभृतयः ।

इदुद्भ्यामिति—लोपो वेति पदद्वयमनुवर्त्तते । मुणि + उ इत्यत्रानेनोतोलोपे भो ! मुणि ! पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे भो ! मुणी ! । मुणि + अ इत्यत्राएदतोस्सानामस्त्रियामिति सूत्रेण णो इत्यादेशे भो ! मुणिणो, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे भो ! मुणी । एवं सर्वत्र बोध्यम् ॥

अथ उकारान्ताः पुल्लिङ्गाः

साहू ।

अतोऽयोडवोडौ पुंसि ॥ ४ । ३ । ५१ ॥

इकारोकाराभ्यां परस्य प्रथमाबहुवचनस्य क्रमेणायोड् अवोड् इत्यादेशौ वा स्यातां पुंसि । साहवो, साहुणो, साहू । साहुं । साहुणो, साहू । साहुणा । साहूहिं, साहूहि । साहुस्स साहुणो । साहूअ । साहूणं, साहूण । साहुणो, साहूओ । साहूहिन्तो । साहुस्स, साहुणो । साहूणं, साहूण । साहुंसि, साहुंमि । साहूसु । भो साहु ! साहू ! साहवो, साहुणो, साहू । एवं सवन्नुभाणुप्रभृतयः ।

अतोऽवोडेति—इदुद्भ्याम, वा, इति चानुवर्त्तते । अत इति पञ्चम्यन्तम् । अयोडवोडौ इति प्रथमाद्विवचनान्तम् । पुंसीति सप्तम्यन्तम् । इकारात्परस्यायोड् उकारात्परस्यावोडित्यर्थः । साहु + अ इत्यत्रानेन-

सूत्रेणाकारस्यावोडादेशे डित्वाट्टेर्लोपे साहवो, एतदभावे णो इत्यादेशे साहुणो, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे साहू ॥ साहु + म् इत्यत्रानुस्वारे साहुं। साहु इ इत्यत्रेकारस्य णो इत्यादेशे साहुणो, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे साहू ॥ साहु + इणेत्यत्र 'इणस्य णा' इत्यनेन णादेशे साहुणा। साहु + इहि इत्यत्रेणाणेहीसीसूनामिति वैकल्पिके ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घे साहूहिं, ममागमाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे साहूहि ॥ साहु + अए इत्यत्र 'अएतः स्सो नाम्नः' इत्यनेन स्सादेशे साहुस्स, तदभावे णो इत्यादेशे साहुणो। तदभावे पूर्वसवर्णदीर्घे साहूए। साहु + अण इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे इणाणेहिसीसूनामिति सूत्रेण वैकल्पिके ममागमे मस्यानुस्वारे साहूणं, पक्षे साहूण ॥ साहु + अतो इत्यत्र अएदतोस्सानामस्त्रियामित्यनेन णो इत्यादेशे साहुणो, पक्षे तकारस्य यकारे लोपे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे साहूओ। साहु + इहिन्तो इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे साहूहिन्तो ॥ साहुस्स, साहुणो साहूणं, साहूण ॥ अत्र पूर्ववज्ज्ञेयम्। साहु + मि इत्यत्र सिरिति सूत्रेण स्यादेशे मौ व्यञ्जनादौ नाम्न इत्यनेन ममागमेऽनुस्वारे साहुंसि, स्यादेशाभावे साहुंमि, साहु + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे साहूसु ॥ साहु + उ इत्यत्रोतो लोपे भो ! साहु ! पूर्वसवर्णदीर्घे भो ! साहू ! शेषं पूर्ववत् ॥ एवं सवन्नुभाणुप्रभृतयो बोध्याः ॥

बहोरवेडतो वा पुंसि । ४ । ३ । ५७ ॥

बहुशब्दात्परस्य प्रथमाबहुवचनस्यावेडादेशो वा स्यात् बहवे, बहवो, बहुणो । बहू

बहोरिति—बहोरिति पञ्चम्यन्तम्। अवेडिति प्रथमान्तम्। अत इति षष्ठ्यन्तम्। वेत्यनुवर्त्तते। बहु + अ इत्यत्रानेन सूत्रेणावेडादेशे डित्वादुकारस्य लोपे बहवे, अवेडादेशाभावेऽतोऽयोडवोडौ पुंसीति सूत्रेणावोडादेशे उलोपे बहवो, पक्षे णो इत्यादेशे बहुणो पूर्वसवर्णदीर्घे बहू ॥ बहुशब्दो बहुत्वसंख्याविशिष्टअतो वाचकः नित्यं बहुवचनान्तः ॥ शेषं साहुवत् ॥

पितुप्रभृतिभ्यो डाः । ४ । ३ । ४ ॥

एभ्यो विहितस्योत्प्रत्ययस्य डादेशः स्यात् । पिया, पिता ।

पितुप्रभृतिभ्य इति—उतइत्यनुवर्त्तते। पितु + उत् इत्यत्रानेनोतः स्थाने डादेशे तकारस्य यकारे पिया । यकाराभावे पिता ॥

अतोडरोः । ४ । ३ । ५ ॥

पितुप्रभृतिभ्यः शब्देभ्यः परस्यातो 'डरो' इत्यादेशः स्यात् । पियरो, पितरो ।

अत इति—पितुप्रभृतिभ्य इत्यनुवर्त्तते। पितु + अत् इत्यत्रानेन सूत्रेणातो डरो इत्यादेशे डस्य लोपे डित्वाट्टिलोपे तस्य यत्वे पियरो, यत्वाभावे पितरो ॥ अयञ्चादेशो नित्यस्तेन पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घं विधाय पितू इत्येवं न भवति ॥

मो डरम् । ४ । ३ । ७ ॥

पितुप्रभृतिभ्यः शब्देभ्यः परस्य मस्य डरमित्यादेशः स्यात् । पियरं, पितरं ।

म इति—पितुप्रभृतिभ्य इत्यस्यानुवृत्तिः। पितु + म इत्यत्रानेन सूत्रेण मकारस्य डरमित्यादेशे डलोपे डित्वाट्टिलोपे तकारस्य यकारे मस्यानुस्वारे पियरं, यकाराभावपक्षे पितरं। अत्रादेशस्य नित्यत्वात् पितुमिति न ॥

एः स्सस्य वा। ४। ३। ६॥

पितुप्रभृतिभ्यः शब्देभ्यः परस्य स्सस्यैसादेशो वा स्यात्। पिउए, पिउस्स, पिउणो।

एः स्सेति—पितुप्रभृतिभ्य इत्यनुवर्त्तते। अत्र स्सप्रत्ययस्य सामान्यतयोक्तत्वेन चतुर्थ्येकवचने स्सादेशेऽप्ययमादेशो बोध्यः। पितु + अए इत्यत्राएतः स्सो नाम्न इति सूत्रेण स्सादेशेऽनेन सूत्रेणैकारादेशे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे च पिउए, एतदभावे पिउस्स, स्सादेशाभावेऽएदतोत्स्सानामस्त्रियामिति सूत्रेण 'णो' इत्यादेशे पिउणो। एवं षष्ठ्येकवचनेऽपि ॥

उत आमन्त्रणे डश्च। ४। ३। ८॥

पितुप्रभृतिशब्देभ्यः परस्यामन्त्रणैकवचनस्योतो डडरमावादेशौ स्यातां पर्यायेण। हे पिय!। हे पियरम्!। शेषं साहुवत् एवं भातु, नत्तु, जामात्वादयः।

उत इति—पितुप्रभृतिभ्य इत्यनुवर्त्तते डरमिति च पितु + उ इति स्थितेऽनेनोकारस्य डादेशे डलोपे डित्वाट्टिलोपे तकारस्य यत्वे 'स्वराद्यस्य स्वरे, इत्यत्र बहुलमित्यनुवृत्त्या यलोपाभावे हे पिय! उकारस्य डरमादेशपक्षे डलोपे डित्वाट्टिलोपे तकारस्य यकारे हे पियरम्! अत्रापि पूर्ववद्यलोपाभावः बहुवचने प्रथमाबहुवचनवत् ॥ शेषमिति पिउणो, पिऊ द्वि० ब० पिउणा, पिऊहिं, पिऊहि ॥तृ०॥ पिउणं, पिऊण च० बहु० ॥ पिउणो, पिऊओ, पिऊहिंतो पञ्चमी। षष्ठी चतुर्थीवत् ॥ पिउंसि, पिउंमि। पिऊसु। स०।

ओत उदिहीहिंतसुसु। ३। २। २६॥

ओतः परेषु उत् इहि इहिंतो इसु इत्येतेषु परेषु पूर्वपरयोः पूर्वसजातीयः स्यात् गो।

ओत इति—पूर्वपरयोः पूर्वं इत्यनुवर्त्तते। गोशब्दादुति प्रत्ययेऽनेनौकारस्योकारस्यचोभयोः स्थाने ओकारे गो। एवमेव गोहिं। गोहिंतो। गोसु ॥

डावोर्गोः। ४। ३। ३६॥

गोः परयोरदितोर्डावोरादेशो भवति। गावो।

डावोरिति—अदितोरित्यनुवर्त्तते। प्रथमाबहुवचनेऽतो द्वितीयाबहुवचने इतश्चानेन डावोर्भवति। तथा च गोशब्दादति विभक्तौ डावादेशे डिति टिलोपे गावो। एवमेव द्वितीयाबहुवचने बोध्यम्।

अिणाएदतोत्स्सभिसु गोर्गवः। ४। ३। २०॥

एषु परेषु गोशब्दस्य गवादेशः स्यात्। गवं। गावो। गवेण। गोहिं। गवाए। गवं। गवा. गवाओ। गोहिंतो। गवस्स।

मिश्राएदिति—मश्चेणश्चाएच्चाओश्च रसश्च मिश्चेति विग्रह इतरेतरयोगद्वन्द्वः । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । देशोऽदन्तः । अतएवैतदादेशे जिणवत्कार्याणि भवन्ति ॥ स्मर्त्तव्यानि । गोहिं इत्यादौ तु गोवत्कार्याणि वन्ति ॥ गोशब्दादणमि विभक्तौ वक्ष्यमाणसूत्रेण डवमादेशे टिलोपे गवं । एवमेव षष्ठीबहुवचनेऽपि ॥

अणस्य डवम् । ४ । ३ । २१ ॥

गोः परस्याणप्रत्ययस्य डवमादेशः स्यात् । गवं । गवे, गवंसि, गवंमि । गोसु । हे गो ! । गावो ॥

अणस्य इति—डावोरिति सूत्रतो गोरित्यनुवर्त्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । गोशब्दादणस्य डवमादेशे टलोपे गवं । मस्यानुस्वारः । सम्बोधने प्रथमावत् सामान्यतया ड्दतोरुपादानात् ॥

अथ सव्वणामशब्दाः

सव्वादीनि सव्वणामानि । १ । १ । २६ ॥

सव्वादयः शब्दाः सव्वणामसंज्ञाः स्युः सव्वे, सव्वो ।

सव्वादय इति—सव्वादीन्युद्दिश्य सव्वणामसंज्ञा विधीयते न तु सव्वणाममुद्दिश्य सव्वादिसंज्ञा लाघवार्थमेव संज्ञाया आवश्यकतयैकस्यानेकसंज्ञाकरणे लाघवाभावेन तत्करणं व्यर्थं स्यात् । किञ्च यच्छब्दयोगः प्राथम्यमित्याद्युद्देश्य लक्षणलक्षिततया सव्वादेरेवोद्देश्यत्वमुचितम् । न च संज्ञाया लाघव प्रयोजनकतया सादिसंज्ञामपहाय नववर्णघटितगुरुसंज्ञाविधाने किं फलमिति वाच्यं, सव्वेसिं णामं सव्वणाममिति महासंज्ञया सर्वार्थवाचकस्यैव सव्वणामसंज्ञाया लाभेन यत्र कस्यचित् सव्वेति नाम कृत्वा सव्वशब्दः प्रयुज्यते तत्र सव्वशब्दस्य सर्वार्थवाचकत्वाभावेन सव्वणामसंज्ञाया अप्रवृत्तेरेव फलत्वात् । एवमग्रेऽपि । सव्व + उ इति स्थिते 'इद्दुतः पुंस्यत' इत्यनेनोकारस्येकारे वृद्धावेकारे सव्वे; इकाराभावे वृध्यावोकारे सव्वो ॥

इः सव्वणामात् । ४ । ३ । ५८ ॥

अकारान्तसव्वणामशब्दात्प्रथमाबहुवचनस्येकारादेशः स्यात्पुंसि । सव्वे । सव्वं । सव्वे । सव्वेणं, सव्वेण । सव्वेहिं, सव्वेहि । सव्वस्स, सव्वाए ।

इः सव्वेति—पुंसीत्यनुवर्त्तते अत इति च यद्यपि सामान्यतः प्रथमाविभक्तौ विधानेऽपि न क्षतिः प्रथमैकवचनेऽपि 'सव्वे' इत्यस्येष्टत्वात् । ननु तथा सति सव्वो इति कथं भवेदिति चेन्न, बहुलग्रहणसम्बन्धात्प्रथमैकवचने विकल्पेन प्रवृत्त्योक्तरूपसिद्धेः । तथापि बहुलग्रहणसम्बन्धाभावसूचनायैव तथोक्तमन्यथाऽत्रापि विकल्पः

सम्भवेत् । तथा चात्रापि सव्वो इत्यनिष्टं रूपं विकल्पेन स्यात् । सव्व + अ इत्यत्रानेनाकारस्यैकारे वृद्धावेकारे सव्वे ॥ सव्व + मं इत्यत्रानुस्वारे सव्वं । सव्वे पूर्ववत् ॥ सव्व + इण इत्यत्रेणाणोहीसीसूनामिति सूत्रेण विकल्पेन ममागमेऽनुस्वारे वृद्धौ सव्वेणं, ममागमाभावे सव्वेण । सव्व + इहि अत्र ममागमेऽनुस्वारे वृद्धौ सव्वेहिं, ममागमाभावपक्षे सव्वेहि ॥ सव्व + अए इति स्थितेऽएतः स्स—इत्यादिना स्सादेशे सव्वस्स, पक्षेऽदिदुत इति सूत्रं प्रबाध्य पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे सव्वाए ॥

अणस्येसिरस्त्रियाम् । ४ । ३ । ६१ ॥

अकारान्तसव्वणामशब्दात्परस्याणप्रत्ययस्येसिरादेशः स्यादस्त्रियाम् । सव्वेसिं, सव्वेसि । सव्वा, सव्वाओ । सव्वेहिंतो । सव्वस्स । सव्वेसिं, सव्वेसि । सव्वंसि, सव्वंमि, सव्वे । सव्वेसु ।

अणस्येसिरिति—सव्वणामात्, अत इति पदद्वयमनुवर्त्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । सव्व + अण इत्यत्रानेन 'इसि' इत्यादेशे इणाणोहीसीसूनामित्यनेन वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारेऽतः स्वरे परस्य सवर्ण इति सूत्रेण वृद्धौ सव्वेसिं, ममागमाभावे सव्वेसि ॥ सव्व + अतोदिति स्थितेऽतोतोऽतः इति सूत्रेणौकारस्य लोपे तकारस्य यकारे लोपे पूर्वसवर्णदीर्घे च सव्वा, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे तकारस्य यत्वे यस्य लोपे प्रकृतिभावे सव्वाओ । सव्व + इहिंतो इति स्थिते वृद्धौ बहुलग्रहणात्तकारस्य यकाराभावे सव्वेहिंतो ॥ सव्वस्स । सव्वेसिं पूर्ववत् ॥

सेः स्सिं वा । ४ । ३ । ५६ ॥

अकारान्तसव्वणामशब्दात्परस्य सप्तम्येकवचनस्य सेः स्सिमादेशो वा स्यात् । सव्वस्सिं ।

सेः स्सिमिति—अतः सव्वणामादिति पदद्वयमनुवर्त्तते । सव्व + सि इत्यत्र सिरित्यनेन स्यादेशेऽनेन सूत्रेण सेः स्सिमादेशेऽनुस्वारे । सव्वस्सिं ॥ पक्षे—सव्व + सि इत्यत्र सिरित्यनेन स्यादेशे मौ व्यञ्जनादौ नाम्न इत्यनेन ममागमेऽनुस्वारे सव्वंसि, स्यादेशाभावे सव्वंमि पक्षे 'मेरिस्' इति सूत्रेण इसादेशे वृद्धौ सव्वे । सव्व + इसु इत्यत्र वृद्धौ सव्वेसु ॥

जतकेभ्योऽतोतो वा म्हाः । ४ । ३ । ६२ ॥

सर्वनामसंज्ञकेभ्य एभ्यः परस्य पञ्चम्येकवचनस्य म्हादेशो वा स्यादस्त्रियाम् । जम्हा । शेषं सव्वशब्दवत् ।

जतकेभ्य इति—जश्च तश्च कश्चेति द्वन्द्वः । सव्वणामात्, अस्त्रियामिति पदद्वयमनुवर्त्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । ज + अतोदित्यत्रानेन सूत्रेण विभक्तेर्म्हादेशे जम्हा, म्हादेशाभावेऽतोतोऽतइति सूत्रेणौकारस्य लोपे तस्य यत्वे यलोपे पूर्वसवर्णदीर्घे च जा, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे जाओ । शेषमिति—जे, जो । ने ॥ प्र० ॥ जं । जे ॥ द्वि० ॥ जेणं, जेण, जेहिं, जेहि ॥ तृ० ॥ जस्स, जाए । जेसिं,

जेसि ॥ च० ॥ जेहिंतो ॥ पं० बहु० ॥ जस्स । जेसिं, जेसि, ॥ ष० ॥ जंसि, जंमि, जे, जस्सिं । जेसु ॥ स० ॥ शेषं सव्वशब्दवदित्यत्र जशब्दस्येति शेषः । तादिशब्देषु विशेषरूपाणां मूल एव । दर्शितत्वात् ।

उत्येततयोरक्लीबे सः । २ । ३ । ७८ ॥

एततशब्दयोरुपधायाः प्रथमैकवचने परे सकारादेशः स्यादक्लीबे ।

उत्येतेति—उपधाया इत्यनुवर्त्तते । उति, एततयोः, अक्लीबे, स, इति पदचतुष्टयम् । एतश्च तश्चेति द्वन्द्वः अन्यवचने परे क्लीबे च सकाराभावादुतीति अक्लीबे इति चोक्तम् । सकारोत्तराकार उच्चारणार्थः ।

एतताभ्यां पुंसि वा । ३ । ४ । ७० ॥

आभ्यां परस्य प्रथमैकवचनस्य लोपो वा स्यात्पुंसि । स, से, सो । ते ।

एतताभ्यामिति—उत इति लोप इति द्वयोरनुवृत्तिः । त + उ-इत्यत्रोत्येततयोरक्लीबे स इत्यनेन तकारस्य सकारेऽनेन विभक्तेर्लोपे स, लोपाभावे 'इदुतः पुंस्यत्' इति सूत्रेणोकारस्येकारे वृद्धौ से, तदभावे वृद्धौ सो । ते । तं । ते ॥ तेणं, तेण । तेहिं, तेहि । तस्स, ताए । तेसिं, तेसि । त + अतोदित्यत्र 'जतकेभ्योऽतोतो वा म्हा' इति विभक्तेर्म्हादेशे तम्हा, एतदभावेऽतोतोऽत इति सूत्रेणौकारस्य लोपे तकारस्य यकारे यलोपे पूर्वसवर्णदीर्घे च ता, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे तस्य यत्वे लोपे प्रकृतिभावे ताओ । तेहिंतो ।

तस्य सास्साय सेः । ४ । ३ । ७२ ॥

तशब्दस्य षष्ठ्येकवचनस्ससहितस्य 'से' इत्यादेशो वा स्यात् । से, तस्स । तेसिं, तेसि ।

शेषं जशब्दवत् ।

तस्येति—स्सेन सहितः सस्सस्तस्येत्यर्थः । वेत्यनुवर्त्तते । षष्ठ्येकवचन एवायमादेशो न तु चतुर्थ्यामप्यनभिधानात्तदाह षष्ठ्येकवचनेति । त + स्सेत्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थाने 'से' इत्यादेशे से, तस्येत्यर्थः । पक्षे तकारस्य स्सादेशे तस्स । तेसिं, तेसि । तंसि, तंमिं, ते तस्सिं । तेसु । के, को । के । कं । के । केणं, केण । केहिं, केहि । कस्स, काए । केसिं, केसि । कम्हा, का, काओ ॥

कादिहिन्तोरितो डओः । ४ । ३ । ३३ ॥

कशब्दात्परस्येहिंतोप्रत्ययस्यादे 'डओ' इत्यादेशः स्यादस्त्रियाम् । कओहिंतो । शेषं जशब्दवत् ।

कादीति—कात्, इहिंतोः, इतः, डओरिति पदचतुष्टयम् । अस्त्रियामित्यनुवर्त्तते । क + इहिंतोऽत्रानेन विभक्तेरादेरिकारस्य 'डओ' इत्यादेशे डलोपे डित्वाट्टिलोपे प्रकृतिभावे कओहिंतो । कस्स । केसिं, केसि । इत्यादि ।

इमस्य सोतः पुंस्ययम् । ४ । ३ । २४ ॥

इमशब्दस्योप्रत्ययसहितस्यायमित्यादेशो वा स्यात्पुंसि । अयं, इमे ।

इमस्येति—उता सह+सोत् तस्य सोत इत्यर्थः। वेत्यनुवर्तते। इम+उ इत्यत्र प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थानेऽयमित्यादेशे अयम्, पक्षे 'इदुतः पुंस्यत' इत्यनेनेकारादेशे वृद्धौ इमे।

इमस्य मोर्णद्। ४। २। ५॥

इमसम्बन्धिनो 'सो' इत्यस्य णडागमो वा स्यात्। इणमो, इमो। इमे।

इमस्येति—वेत्यनुवर्तते। इम+उ इत्यत्रेकाराभावे वृद्धौ 'इमो' इति स्थितेऽनेन सूत्रेण मो इत्यस्य णडागमे टित्वादाद्यवयवे इणमो, णडागमाभावे इमो। इणमो इत्यत्र "जंबू! इणमो अण्हयसंवरविणिच्छयं पवयणस्स निस्सं दं" इति पण्ह० १, १; प्रमाणमस्ति। इम+अ इति स्थिते 'इः सव्वणामादत' इत्यनेनाकारस्येकारादेशे वृद्धावेकारे इमे।

मस्य णो मि। ४। ३। २७॥

इम शब्दसम्बन्धिमकारस्य णकारादेशो वा स्यान्मप्रत्यये परे। इणं, इमं। इमे।

मस्येति— इमस्येति वेति चानुवर्तते। इम+म् इत्यत्रानेन मकारस्य णकारेऽनुस्वारे इणं, पक्षे इमं। इणमित्यत्र "गोयमो इणमब्बवी। उत्त० २३। ३१॥ इणमक्खेवं पुच्छे,, भग० २। १, इति प्रमाणमस्ति। इमे॥ पूर्ववत्।

अस्त्रियामिणेऽण। ४। ३। २८॥

इमशब्दस्याणादेशो वा स्यादिणप्रत्यये परेऽस्त्रियाम्। अणेण, इमेणं, इमेण। इमेहिं, इमेहि। इमस्स, इमाए। इमेसिं, इमेसि। इमा, इमाओ। इमेहिन्तो।

इमस्येति—इमस्येत्यनुवर्तते अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः। इम+इण इत्यवस्थायामनेनेमस्याणादेशे वृद्धौ अणेण, पक्षे वृद्धौ वैकल्पिके ममागमे च कृते ऽनुस्वारे इमेणं, ममागमाभावपक्षे इमेण। इम+इहि अत्र ममागमे वृद्धौ इमेहिं, ममागमाभावे इमेहि॥ इम×अए इत्यत्राएतः स्सोनाम्न, इत्यनेन स्सादेशे इमस्स, स्सादेशाभावे तु पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे इमाए। इम×अण इत्यत्राणस्येसिरस्त्रियामिति सूत्रेण 'इसिरित्यादेशे 'इणाणेहीसीसूनाम्, इति विकल्पेन ममागमेऽनुस्वारे 'अतः स्वरे परस्य सवर्णं इत्यनेन वृद्धौ इमेसिं ममागमाभावे इमेसि॥ इम×अतोदित्यत्रातोतोऽत,इति सूत्रेणौकारस्य लोपे तकारस्य यकारे लोपे पूर्वसवर्णदीर्घे इमा, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे तस्य यत्वे यलोपे प्रकृतिभावे इमाओ। इम×इहिंतोइत्यत्र वृद्धौ इमेहिंतो॥

स्सिंस्सयोरस्। ४। ३। २९॥

इमशब्दस्यासादेशो वा स्यात् स्सिंस्सयोः परयोरस्त्रियाम्। अस्स, इमस्स। इमेसिं, इमेसि।

स्सिंस्सयोरिति—इमस्य, वा, अस्त्रियामिति पदत्रयमनुवर्तते। सित्त्वात्सर्वादेशः। अत्र स्सशब्देन षष्ठ्येकवचनस्यैव ग्रहणं नतु चतुर्थ्येकवचनस्य चतुर्थ्यां तादृशप्रयोगस्यादर्शनात्। इम + स्स इत्यत्रानेन सूत्रेणे- मस्यासादेशे इत्संज्ञकस्य सस्य लोपे अस्स, पक्षे इमस्स। इमेसिं, इमेसि॥ पूर्ववत्॥ इमस्सिं कस्सिंवत्॥

अयः सौ। ४। ३। २६॥

इमशब्दस्यायादेशो वा स्यात् सौ परे। अयंसि, अस्सिं, इमस्सिं, इमंसि, इमंमि इमे, इमेसु। एस, एसे, एसो। एए। एयं। एए। एएणं, एएण। एएहिं, एएहि। एयस्स, एयाए, एएसिं, एएसि। एया, एयाओ। एएहिंतो। एयस्स। एएसिं एएसि एयंसि, एयंमि, एए, एयस्सिं, एएसु। एवमन्नकयरेयरादयः।

अय इति—इमस्य, वा, इतिचानुवर्तते। अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः। इम + मि इत्यत्र 'सिः' इति सूत्रेण स्यादेशेऽनेन सूत्रेणेमस्यायादेशे ममागमेऽनुस्वारे अयंसि, "अयंसि लोए॥ इत्युत्त० १७।२०॥ पक्षे सेः स्सि- मिति सेर्विकल्पेन स्सिमादेशे 'स्सिंस्सयोरस्' इति सूत्रेणेमस्यासादेशे मस्यानुस्वारे अस्सिं, असादेशाभावे इमस्सिं, सिमादेशाभावे ममागमेऽनुस्वारे इमंसि, स्यादेशाभावे तु इमंमि पक्षे मेरिसिति सूत्रेणेसादेशे वृद्धौ इमे। इम + इसु इत्यत्र वृद्धौ इमेसु॥ एत + उ इत्यत्रोत्येततयोरक्लीबे स इत्यनेनोपधायास्तकारस्य सकारे 'एतताभ्यामक्लीबे वा, इत्यनेन विभक्तेर्लोपे एस, लोपाभावे 'इदुतः पुंस्यत इति सूत्रेणोकारस्येकारे वृद्धौ एसे इत्वाभावे वृद्धौ एसो। एत + अ इत्यत्र 'इः सन्वणामादतः' इति सूत्रेणाकारस्येकारे तकारस्य यकारे लोपे वृद्धौ प्रकृतिभावे एए॥ एत + म् इत्यत्र तकारस्य यत्वे लोपाभावेऽनुस्वारे एयं। एत + इ इत्यत्र तस्य यत्वे लोपे वृद्धौ एए॥ एत + इण इत्यत्र तस्य यत्वे लोपे ममागमेऽनुस्वारे वृद्धौ च एएणं, ममागमाभावे एएण। एत + इहि अत्र तस्य यत्वे लोपे वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारे वृद्धौ च एएहिं, ममागमाभावे एएहि॥ एत + अए इत्यत्राएतःस्सो नाम्नः' इति सूत्रेण स्सादेशे एयस्स, बहुलग्रहणात्तकारस्य यकाराभावे एतस्स, स्सादेशाभावे तकारस्य यकारे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे बहुलग्रहणाद् यकारस्य लोपाभावे एयाए। एत + अण इत्यत्र 'अणस्येसिरस्त्रियामिति सूत्रेणेस्यादेशे 'इणाणेहीसीसूनाम्' इति वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारे तकारस्य यकारे लोपे च वृद्धौ एएसिं, ममागमाभावपक्षे एएसि॥ एत + अतोदित्यत्रातोतोऽत इति सूत्रेणौकारस्य लोपे तकारस्य यत्वे लोपे एत + अ इति जाते पूर्वसवर्णे दीर्घे तकारस्य यकारे बहुलग्रहणाल्लोपाभावे एया, ओकारस्य लोपा भावपक्षे पूर्ववत् सर्वकार्ये प्रकृतिभावे एयाओ। एत + इहिंतो इत्यत्र वृद्धौ एतशब्दस्थतकारस्य यकारे लोपे बहुलग्रहणाद्विभक्तिस्थतकारस्य यत्वाभावे प्रकृतिभावे एएहिंतो॥ एयस्स। एयसिं, एएसि॥ पूर्ववत्॥ एत। मि इत्यत्र स्यादेशे तस्य यत्वे ममागमेऽनुस्वारे एयंसि, स्यादेशाभावे एयंमि; पक्षे मेरिसादेशे तकारस्य यकारे

लोपे वृद्धौ प्रकृतिभावे एए। सेःस्सिमिति स्सिमादेशे तकारस्य यकारे एयस्सिं। एत + इसु इत्यत्र वृद्धौ तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे एएसु ॥

अम्हस्य हमहमौ सोतः । ४ । ३ । ७६ ॥

उप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य हं अहमित्यादेशौ पर्यायेण स्याताम् । हं, अहं ।

अम्हस्येति—उता सह वर्तमानः सोत् तस्येति बहुव्रीहिः । अम्हशब्दस्यानेन हमादेशेऽनुस्वारे हं, अहमादेशे अहं ।

वा सातो वयम् । ४ । ३ । ८२ ॥

अप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य वयमित्यादेशो वा स्यात् । वयं, अम्हे ॥

वा इति—अम्हस्येत्यनुवर्त्तते । अता सह वर्तमानः सात् तस्येति बहुव्रीहिः । अम्ह + अ इत्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थाने वयमादेशेऽनुस्वारे वयं; पक्षे 'इः सव्वणामादतः' इति सूत्रेणाकारस्येकारे वृद्धौ अम्हे ॥

समो मेमंममममम: । ४ । ३ । ७७ ॥

मप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य मे, मं, मम, ममम् इत्येते आदेशाः पर्यायेण स्युः । मे, मं, मम ममम् ॥

सम इति—अम्हस्येत्यनुवर्तते । मकारेण सह वर्तमानः सम तस्येति बहुव्रीहिः । अम्ह + म् इत्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थाने मे इत्यादेशे मे, तदभावे 'मं' इत्यादेशे मं, तदभावे 'मम' इत्यादेशे मम, एतदभावे ममम्मित्यादेशेऽनुस्वारे ममं ॥ एवं रूपचतुष्टयम् ॥

सेतो नेनाचौ । ४ । ३ । ८३ ॥

द्वितीयाबहुवचनसहितस्याम्हशब्दस्य ने नो इत्यादेशौ वा स्याताम् । णे, ने, णो, नो, अम्हे ।

सेतो नेनेति—अम्हस्य, वा, इतिपदद्वयमनुवर्तते । इता सह सेत् तस्येति बहुव्रीहिः । अम्ह + इ इत्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थाने ने, इत्यादेशे णत्वे णे, णत्वाभावे ने, एवं णो, नो, पक्षे वृद्धौ अम्हे ॥

सेणस्य मेमएमया: । ४ । ३ । ७८ ॥

इणप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य मे, मए, मया इत्येत आदेशाः पर्यायेण स्युः । मे, मए, मया ।

सेणस्येति—अम्हस्येत्यनुवर्तते । इणेन सह वर्तमानः सेणस्तस्येति बहुव्रीहिः । मेश्च, मएश्च मयाश्चेति द्वन्द्वः । अम्ह + इण इत्यत्रेणसहितस्याम्हशब्दस्य स्थानेऽनेन सूत्रेण मे इत्यादेशे मे, मए इत्यादेशे प्रकृतिभावे मए, मया इत्यादेशे मया ।

सेहेर्नेः । ४ । ३ । ८४ ॥

इहिप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य ने इत्यादेशो वा स्यात् । णे, अम्हेहिं, अम्हेहि ॥

सेहेरिति—अम्हस्य, वा, इतिद्वयोरनुवृत्तिः । इहिसहितः सेहिस्तस्येति बहुव्रीहिः । अम्ह + इहि इत्यत्रानेनेहिसहितस्याम्हशब्दस्य ने इत्यादेशे णत्वे णे; पक्षे वृद्धौ वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारेऽम्हेहिं, ममागमाभावेऽम्हेहि । दिट्ठं च णे सुयंच णे । आचा० । १ । ४ । २ ॥

सातोतो ममाओममाहिंतावौ । ४ । ३ । ८० ॥

पञ्चम्येकवचनसहितस्याम्हशब्दस्य ममाओ ममाहिंतो इत्येतावादेशौ पर्यायेण स्याताम् । ममाओ, ममाहिंतो । अम्हेहिंतो ।

सातोत इति—अम्हस्येत्यनुवर्तते । अतोता सह सातोत् तस्येति बहुव्रीहिः ममाओश्च ममाहिंतोश्चेति द्वन्द्वः । अम्ह + अतोदित्यत्रानेन सूत्रेणातोत्सहितस्याम्हशब्दस्य स्थाने ममाओ इत्यादेशे प्रकृतिभावे ममाओ, पक्षे ममाहिंतो इत्यादेशे ममाहिंतो । अम्ह + इहिंतो इत्यत्र वृद्धौ अम्हेहिंतो । बहुलग्रहणान्न सर्वत्र तकारस्य यकारः ॥

सस्सस्य मेममममंमज्झंमहंमोमज्झाः । ४ । ३ । ७६ ॥

स्सप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य मे मम ममं मज्झं महं मो मज्झ इत्येते आदेशाः स्युः पर्यायेण । मे, मम, ममं, मज्झं, महं, मो, मज्झ ।

सस्सस्येति—अम्हस्येत्यनुवर्तते । स्सेन सह सस्सस्तस्येति विग्रहः । मेश्च ममश्च ममञ्च मज्झञ्च महञ्च मोश्च मज्झश्चेति द्वन्द्वः । अम्ह + स्स इत्यत्र प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थानेऽनेन सूत्रेण मे इत्यादेशे मे, ममादेशे मम, ममादेशेऽनुस्वारे ममं, मज्झमादेशेऽनुस्वारे मज्झं, महमादेशेऽनुस्वारे महं, मो इत्यादेशे मो, मज्झादेशे मज्झ ॥

अम्हं साणस्य । ४ । ३ । ८५ ॥

अणसहितस्याम्हशब्दस्याम्हमादेशो वा स्यात् । अम्हं ।

अम्हमिति—अणेन सह साणस्तस्येति बहुव्रीहिः । अम्हस्य, वेति द्वयोरनुवृत्तिः । अम्ह + अण इत्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोःस्थाने 'अम्हमि' त्यादेशेऽनुस्वारे अम्हं ।

नेनवस्साकमः । ४ । ३ । ८६ ॥

अणसहितस्याम्हशब्दस्य ने, नो, अस्साकमित्येत आदेशा वा स्युः । णे, ने, णो, नो, अस्साकं, अम्हाणं ।

नेनवेति—साणस्य, अम्हस्य, वेति पदत्रयमनुवर्तते । अम्ह+अण इत्यत्रानेन ने इत्यादेशे णत्वे णे,

णत्वाभावे ने, नो इत्यादेशे णत्वे णो, णत्वाभावे नो, अस्साकमादेशेऽनुस्वारे अस्साकं, एतदभावे ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घेऽनुस्वारे अम्हाणं ॥ णो इत्यत्र "एयं णो पेच्च भवे" ओव० २७; इति प्रमाणम् ॥ एतदस्माकं प्रेत्य भव इति तदर्थः

मम्हि ससेः । ४ । ३ । ८७ ॥

सिप्रत्ययसहितस्याम्हशब्दस्य मम्हिमादेशो वा स्यात् । मम्हिं ।

मम्हिमिति—अम्हस्येति वेति चानुवर्तते । सिना सह ससिस्तस्येति विग्रहः । अम्ह+मि इत्यत्र 'सिः' इतिसूत्रेण मेः स्यादेशेऽनेन सिसहितस्याम्हस्य 'मम्हिम्' इत्यादेशेऽनुस्वारे मम्हिं ॥ दृश्यते च "तं भद्दं णं भवतु देवाणुप्पियाणं मम्हि जस्स अणुप्पभावेण अक्किट्ठे जाव विहरामिः" भग० ॥३-१॥ तद्भद्रं भवतु देवानुप्रियाणां मयि यस्यानुप्रभावेणाक्लिष्टो यावद्विहारामि ॥ पक्षे—

मौ ममम् । ४ । ३ । ८१ ॥

अम्हशब्दस्य ममामित्यादेशः स्यात् सप्तम्येकवचने परे । ममंसि, ममंमि । अम्हेसु ॥

माविति—अम्हस्येत्यनुवर्तते । अम्हमि इत्यत्र मेः स्यादेशेऽम्हशब्दस्यानेन सूत्रेण ममादेशेऽनुस्वारे+ममंसि स्यादेशाभावेऽनेन ममादेशेऽनुस्वारे ममंमि । अत्र बाहुलकाल्लोपो न । अम्ह+इसु इत्यत्र वृद्धौ अम्हेसु ॥

अथ तुम्हशब्दः ॥

सोतस्तुम्हस्य तन्तुमेतुममः । ४ । ३ । ८८ ॥

उप्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्य तं तुमे तुमम् इत्येत आदेशाः पर्यायेण स्युः । तं, तुमे, तुमम् ।

सोत इति—उता सह सोत्तस्येति बहुव्रीहिः । तश्च तुमेश्च तुमश्चेति द्वन्द्वः तुम्ह+उ इत्यत्रानेन सूत्रेणोप्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्य तमादेशेऽनुस्वारे तं, तुमे इत्यादेशे तुमे,, तुममित्यादेशेऽनुस्वारे तुमं ॥

बहुवचनेषु तुब्भतुज्झौ वा । ४ । ३ । ८६ ॥

तुम्हशब्दस्य बहुवचने परे तुब्भ तुज्झ इत्येतावादेशौ वा स्तः पर्यायेण । तुब्भे, तुज्झे, तुम्हे ।

बहुवचनेष्विति—तुम्हस्येत्यनुवर्तते । तुब्भश्च तुज्झश्चेति द्वन्द्वः । तुम्ह+अ इत्यत्रानेन तुब्भादेशे 'इः सव्वणामादतः' इत्यनेनाकारस्येकारे वृद्धौ तुब्भे, तुज्झादेशपक्षे तुज्झे, एतदभावे तुम्हे ॥

समस्तेः । ४ । ३ । ६० ॥

मप्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्य 'ते' इत्यादेशो वा स्यात् । ते । पक्षे ।

सम इति—तुम्हस्येति वेति चानुवर्त्तते । म् सहितः सम् तस्येति समासः तु म्ह + म् इत्यत्रानेन प्रकृति-प्रत्यययोरुभयोः 'ते' इत्यादेशे ते, पक्षे—ते इत्यादेशाभाव इत्यर्थः ।

स्मिमोस्तुम्हस्य हस्य । ३ । ४ । ५७ ॥

मिप्रत्यये म्प्रत्यये च परे तुम्हसम्बन्धिहकारस्य लोपः स्यात् । तुमं । तुब्भे, तुज्झे, तुम्हे ।

मिमोरिति—लोप, इत्यनुवर्तते । मिमोरिति सप्तम्यन्तम् । तुम्ह + म् इत्यत्रानेन हकारस्य लोपेऽनुस्वारे तुमं । तुम्ह + इ इत्यत्र 'बहुवचनेषु तुब्भतुज्झौ वा' इतिसूत्रेण तुब्भादेशे वृद्धौ तुब्भे तुज्झादेशपक्षे तुज्झे पक्षे तुम्हे ॥

सेणस्य तुमे: । ४ । ३ । ६२ ॥

इणप्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्य तुमे इत्यादेशः स्यात् । तुमे । तुब्भेहिं, तुज्झेहिं, तुम्हेहिं, तुब्भेहि, तुज्झेहि, तुम्हेहि ।

सेणस्येति—इणेन सहितः सेणस्तस्येति विग्रहः । तुम्हस्येत्यनुवर्तते । तुम्ह + इण इत्यत्रानेनेणसहितस्य तुम्हस्य ते इत्यादेशे तुमे । तुम्ह + इहि इत्यत्र 'बहुवचनेषु तुब्भतुज्झौ वा' इतिसूत्रेण तुब्भादेशे 'इणाणेहीसीसूनामिति' सूत्रेण ममागमेऽनुस्वारे वृद्धौ तुब्भेहिं, ममागमाभावे तुब्भेहि, तुज्झादेशे तुज्झेहिं, तुज्झेहि, आदेशाभावपक्षेतु तुम्हेहिं, तुम्हेहि ॥

सातोतस्तुमाहिंतो: । ४ । ३ । ६४ ॥

अतोत्प्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्य 'तुमाहिंतो' इत्यादेशः स्यात् । तुमाहिन्तो । तुब्भेहिंतो तुज्झेहिन्तो, तुम्हेहिंतो ।

सातोत इति—अतोता सह वर्तते सातोत्तस्येति बहुव्रीहिः । तुम्हस्येत्यनुवर्तते । तुम्ह + अतोदित्यत्रानेन प्रकृतिप्रत्ययसमुदायस्य तुमाहिंतो इत्यादेशे तुमाहिंतो । तुम्ह इहिंतो इति स्थिते तुब्भादेशे वृद्धौ तुब्भेहिंतो, तुज्झादेशे तुज्झेहिंतो, एतदभावे वृद्धौ तुम्हेहिंतो ॥

सस्सस्य तेतवतुज्झंतुमं तुहंतुब्भंतुज्झा: । ४ । ३ । ६३ ॥

स्सप्रत्ययसहितस्य तुम्हशब्दस्यैत आदेशाः पर्यायेण स्युः । ते, तव, तुज्झं, तुमं, तुहं, तुब्भं, तुज्झ ।

सस्सस्येति—स्सेन सहितः सस्सस्तस्येति समासः । तुम्हस्येत्यनुवर्तते । तुम्हस्स इत्यवस्थायां स्ससहितस्य तुम्हस्यानेन सूत्रेण ते इत्यादेशे ते, एवं तव तुज्झमित्यादिकमपि बोध्यम् । चतुर्थ्येकवचनेऽप्येतादृशमेव "अएतःस्सो नाम्नः" इत्यत्र बहुलमित्यनवर्तनान्नित्यमेवात्र प्रवृत्तौ तुम्हाए इत्यादेरसम्भवात् ॥

अणस्य मः । ४ । ३ । ६१ ॥

तुम्हशब्दसम्बन्धिनोऽणप्रत्ययस्य मादेशो वा स्यात् । तुब्भं, तुज्झं, तुम्हं, तुम्हाणं । तुमंसि, तुमंमि । तुब्भेसु, तुज्झेसु, तुम्हेसु ।

अणस्येति—अणस्येति षष्ठ्यन्तम् । मः प्रथमान्तम् । अकार उच्चारणार्थः तुम्ह + अण इत्यत्र "बहुवचनेषु तुब्भतुज्झौ वा" इत्यनेन तुब्भादेशेऽनेन सूत्रेण मकारेऽनुस्वारे तुब्भं, तुज्झादेशे तुज्झं, तदभावे तुम्हं । मादेशाभावे तुम्हाणं । तुज्झाणं, तुब्भाणं, इत्यपि बोध्यं सूत्रप्राप्तेः समानत्वात् । एवं चतुर्थीबहुवचनेप्येतादृशमेव रूपं बोध्यम् । तुम्ह + मि इत्यत्र मिमोस्तुम्हस्य ह्रस्वेति सूत्रेण हलोपे मौ व्यञ्जनादौ नाम्न इति सूत्रेण ममागमेऽनुस्वारे 'सि' रित्यनेन सूत्रेण स्यादेशे तुमंसि, स्यादेशाभावे तुमंमि । मकारस्य लोपस्तु बाहुलकान्न । तेन 'तुमे' इति न भवति । तुम्ह + इसु इत्यत्र तुब्भादेशे वृद्धौ तुब्भेसु एवं तुज्झेसु पक्षे तुम्हेसु ।

॥ इति स्वरान्ताः पुल्लिङ्गाः ॥

अथ स्वरान्ताः स्त्रीलिङ्गाः ॥

तत्राकारान्तो मालाशब्दः । माला ॥

तत्रेति—तत्र तेषु स्वरान्तस्त्रीलिङ्गेषु मालाशब्दः कथ्यते । माला + उ इत्यत्र "आदिदुद्भ्यः—" इति सूत्रेण पूर्वसवर्णदीर्घे माला ।

अदितोरोगादिदुद्भ्यः स्त्रियां वा । ४ । ३ । ७० ॥

आदिदुद्भ्यः परयोः प्रथमाद्वितीयाबहुवचनयोरोगागमो वा स्यात् स्त्रियाम् । मालाओ, माला ।

आदितोरिति—अच्च इच्चेति द्वन्द्वः । माला + अ इत्यत्रानेनौगागमे कित्वादन्त्यावयवे माला + अओ इति जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाओ, ओगागमाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे माला ॥

आदीदूतां ह्रस्वो बहुलंमि । ३ । ३ । १ ॥

आकारेकारोकाराणां मपरे ह्रस्वो बहुलं स्यात् । मालं । मालाओ, माला ।

आदीदूतामिति—आच्च ईच्च ऊच्चेति द्वन्द्वः । माला + म् इति स्थितेऽनेनाकारस्य ह्रस्वत्वेऽनुस्वारे च मालं । माला + इ इत्यत्र 'आदितोरोदादिदुद्भ्यः स्त्रियां वेति सूत्रेण 'ओक्' इत्यागमे माला + इओ इति जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाओ, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे माला ॥

इणस्समीनामए: । ४ । ३ । ७१ ॥

आदिदुङ्भ्यः परेषामेषां विभक्तीनामए इत्यादेशः स्यात् स्त्रियाम् । मालाए । मालाहिं, मालाहि । मालाए । मालाणं । मालाओ मालाहिन्तो । मालाए । मालाणं । मालाए । मालासु

इणस्समीति—आदिदुङ्भ्यः स्त्रियामिति पदद्वयमनुवर्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । माला + इण इत्यत्रानेन 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाए । माला + इहि इत्यत्रेणाणेहीसीसूनामिति सूत्रेण वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे मालाहिं, ममागमाभावे मालाहि । माला + अए इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाए । माला + अण इत्यत्र ममागमेऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे मालाणं ॥ माला + अतोदित्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे च मालाओ । माला इहिंतो इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे मालाहिंतो । माला+स्स इत्यत्रानेन सूत्रेण स्सस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाए । अत्र माला स्स इति दशायां 'संयुक्ते' इति सूत्रेण ह्रस्वस्तु न भवति, 'निमित्तं विनाशोन्मुखं दृष्ट्वा तत्प्रयुक्तं कार्यं न कुर्वन्ति' इति परिभाषया स्सकारस्य विनाशभावित्वेन तन्निमित्तकह्रस्वाप्रवृत्तेः । मालाणं पूर्ववत् ॥ माला मि इत्यत्रानेन सूत्रेण मेः 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे मालाए । माला + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे मालासु ॥

आतो डेः । ४ । ३ । १० ॥

आकारान्तान्नाम्नः परस्यामन्त्रणैकवचनस्य डे इत्यादेशो वा स्यात् । भो माले ! माला ।

आत इति—वा, उतः, आमन्त्रणे, नाम्न इत्येतेषामनुवृत्तिः । माला+उ इत्यत्रानेनोकारस्य 'डे' इत्यादेशे डित्त्वादाकारस्य लोपे भो माले !, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे माला ! । बहुवचने प्रथमाबहुवचनवत् ॥

अम्माया डोश्च । ४ । ३ । ११ ॥

अम्मा शब्दात्परस्यामन्त्रणैकवचनस्य डो इत्यादेशो वा स्यात् । भो अम्मो ! भो अम्मे ! भो अम्मा ! ।

अम्मेति—आमन्त्रणे उतः वा इति पदत्रयमनुवर्तते । अम्मा+उ इत्यत्रानेनोकारस्य डो इत्यादेशे डित्त्वाट्टिलोपे भो अम्मो !, डे इत्यादेशे भो अम्मे ! आदेशाभावपक्षेतु पूर्वसवर्णदीर्घे भो अम्मा ! । शेषं मालावत् ॥

सिमातोऽणस्य । ४ । ३ । ६० ॥

आकारान्तसव्वणामशब्दात् परस्याणस्य सिमादेशः स्यात् । सव्वासिं ॥ षष्ठी बहुवचनेऽप्येवमेव ॥ शेषं मालावत् ॥

सिमात् इति—विशेषणन्तदन्तस्येत्यनेनाकारान्तादिति लाभः । सव्वणामात् इति पदमनुवर्तते । अनेकवर्णत्वात्सर्वादेशः । सव्वा+अण इत्यत्रानेन सूत्रेण सिमादेशेऽनुस्वारे सव्वासिं ॥ शेषमिति सव्वा ।

सव्वाओ, सव्वा ॥ १ ॥ सव्वं । सव्वाओ, सव्वा ॥ २ ॥ सव्वाए । सव्वाहिं, सव्वाहि ॥ ३ ॥ सव्वाए । चतुर्थी एक व० ॥ सव्वाओ । सव्वाहिंतो ॥ ५ ॥ सव्वाए । सव्वासिं ॥ ६ ॥ सव्वाए । सव्वासु ॥ ७ । हे सव्वे ! हे सव्वा !। हे सव्वाओ ! हे सव्वा ॥ आमन्त्रणम् ॥

इणे जातयोरिः ४ । ३ । ६६ ॥

जाताशब्दयोरिकारादेशो वा स्यादिणे परे । जीए, जाए । जाहिं, जाहि ॥

इण इति—अन्त्यस्य पठ्येति परिभाषया जाताशब्दयोरन्त्यस्येकारादेशः । वेत्यनुवर्तते । जा । जाओ, जा ॥ जं । जाओ, जा ॥ जा + इण इत्यत्रानेन सूत्रेण जाशब्दस्येकारादेशो 'इणस्समीनामएः' इति सूत्रेणेणस्याए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे जीए, इकारादेशाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे जाए । जा + इहि ममागमेऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे जाहिं, ममागमाभावपक्षे जाहि ॥

अएस्ससमीनां जाकातेमाभ्यो डीसे । ४ । ३ । ६८ ।

जा का ता इमाशब्देभ्यः परेषां चतुर्थीषष्ठीसप्तम्येकवचनानां 'डीसे' इत्यादेशो वा स्यात् । जीसे, जाए ३ ॥ शेषं सव्वाशब्दवत् । एवं काताशब्दौ ।

अएस्सेति—वेत्यनुवर्तते । अएश्च स्सश्च मिश्च अएस्समयस्तेषामिति विग्रहः । जा च का च ता चेमा च जाकातेमास्तेभ्य इति समासः । जा + अए इत्यत्रानेन विभक्तेः 'डीसे''इत्यादेशे डित्वाट्टिलोपे जीसे, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे जाए । जासिं ॥ जाओ । जाहिंतो ॥ जा + स्स इत्यत्राप्यनेन डीसे इत्यादेशे आकारलोपे जीसे, पक्षे जाए ॥ जासिं ॥ जीसे, जाए । जासु ॥ हे जे ! हे जा !। हे जाओ !, हे जा ! ॥ एवं काशब्दे ताशब्दे चाप्यूह्यम् ॥

स्त्रियामियम् । ४ । ३ । १५ ॥

इमशब्दस्योप्रत्ययसहितस्येयमित्यादेशो वा स्यात् स्त्रियाम् । इयं, इमा ।

स्त्रियामिति—इमस्य सोतः वेति पदत्रयस्यानुवृत्तिः । इमा + उ इत्यत्रानेन सूत्रेण प्रकृतिप्रत्यययोरुभयो स्थाने इयमित्यादेशेऽनुस्वारे इयं, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे ।

डेरिमात्स्त्रियाम् । ४ । ३ । ३८ ॥

इमशब्दात्परयोरदितोर्डे इत्यादेशो वा स्यात् स्त्रियाम् । इमे, इमाओ, इमा । इमं । इमे, इमाओ, इमा ॥ इमाए । इमाहिं, इमाहि ॥ इमीसे, इमाए । इमासिं ॥ इमाओ । इमाहिन्तो ॥

डेरिति—अदितोर्वेति पदद्वयमनुवर्तते । इमा + अ इत्यत्रानेनाकारस्य डे इत्यादेशे डित्वादाकारलोपे इमे, एतदभावे ओगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे इमाओ, तदभावे पूर्वसवर्णदीर्घे इमा ॥ इमं । इमे, इमाओ.

इमा ॥ २ ॥ इमाए । इमाहिं, इमाहि ॥ ३ ॥ इमीसे, इमाए । इमासिं ॥ ४ ॥ इमाओ । इमाहिंतो ॥ ५ ॥ एतेषां साधुत्वं पूर्ववद्बोध्यम् ॥

स्सस्य डीए: स्त्रियामिमात् । ४ । ३ । ६३ ॥

इमाशब्दात्परस्य स्सप्रत्ययस्य 'डीए' इत्यादेशो वा स्यात् स्त्रियाम् ॥ इमीए, इमीसे, इमाए । इमासिं ॥ इमसिे, इमाए ।

स्सस्येति—वेति पदमनुवर्तते । इमा + स्स इत्यत्रानेन स्सस्य 'डीए' इत्यादेशे डित्त्वादाकारस्य लोपे प्रकृतिभावे इमीए, पक्षे 'अएस्समीनां', इत्यादिना विभक्ते 'डींसे' इत्यादेशे डित्त्वादाकारलोपे इमीसे, तदभावे 'इणस्समीनामए' रित्यनेन स्सस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे व्यस्तोच्चारणसामर्थ्यात् प्रकृतिभावे इमाए । इमासिं ॥ पूर्ववत् ॥ इमा + मि इत्यत्र परत्वाद् "अएस्समीनां" इत्यनेन 'डीसे' इत्यादेशे डित्त्वादाकारलोपे इमीसे पक्षे मे: 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे इमाए ॥

मेर्डीसाए: क्वचिद् । ४ । ३ । ६४ ॥

इम शब्दात्परस्य मिप्रत्ययस्य डीमाएरित्यादेशो वा स्यात् स्त्रियां क्वचित् । इमीसाए । इमासु ॥ एसा । एयाओ, एया ॥ शेषं सव्वावत् ॥

मेरिति—इमात्स्त्रियां वेत्यनुवर्तते । 'इमीसाए' इत्यपि प्रयोग: क्वचिद् दृश्यते, अतएवोक्तं क्वचिदिति इमा + मि इत्यत्रानेन मे: 'डीसाए' इत्यादेशे डित्त्वादाकारलोपे इमीसाए । इमा + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे इमासु ॥ एता + उ इत्यत्र 'डत्येततयोरक्लीवे स:' इत्यनेन सूत्रेण तस्य सत्वे पूर्वसवर्णदीर्घे एसा । एसा + अ इत्यत्र तकारस्य यकारे "अदितोरोगादिदुद्भय: स्त्रियां वा" इत्यनेनौगागमे एया + अ ओ इति जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे एयाओ, ओगागमाभावे एया ॥ शेषं सव्वाशब्दवद्बोध्यम् ॥

इकारान्त: स्त्रीलिङ्गो दिट्ठिशब्द: ॥

दिट्ठी । दिट्ठीओ, दिट्ठी । दिट्ठिं । दिट्ठीओ, दिट्ठी ॥ दिट्ठीए । दिट्ठीहिं, दिट्ठीहि ॥ दिट्ठीए दिट्ठीणं ॥ दिट्ठीओ । दिट्ठीहिंतो ॥ दिट्ठीए । दिट्ठीणं ॥ दिट्ठीए । दिट्ठीसु ॥ भो दिट्ठी ! ॥ भो दिट्ठीओ ! भो दिट्ठी ! ॥

दिट्ठीति—दिट्ठि + उ इत्यत्र 'आदिवर्णोवर्णभ्य' इति सूत्रेण पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठी । दिट्ठि + अ इत्यत्र 'अदितोरोगादिदुद्भय: स्त्रियां वा' इति सूत्रेण विकल्पेनौगागमे दिट्ठि + अ ओ इति जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीओ, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठी ॥ दिट्ठि + म् इत्यत्रानुस्वारे दिट्ठिं । दिट्ठि + इ इत्यत्रागागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीओ, ओगागमाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठी ॥ दिट्ठि + इणा इत्यत्रेणस्समीनामएरिति सूत्रेण विभक्ते 'रए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीए । दिट्ठि + इहि इत्यत्रेणाएहीसोसूनामिति ममागमे

अनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठीहिं, ममागमाभावे दिट्ठीहि ॥ दिट्ठि + अए अत्र पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीए । दिट्ठि + अण इत्यत्र ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घेऽनुस्वारे दिट्ठीणं ॥ दिट्ठि + अतोदित्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे दिट्ठीओ । दिट्ठि + इहिंतो इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठीहिंतो ॥ दिट्ठि + स्स इत्यत्र स्सस्य 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीए । दिट्ठीणं । पूर्ववत् ॥ दिट्ठि + मि इत्यत्र विभक्ते 'रए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे दिट्ठीए । दिट्ठि + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे दिट्ठीसु ॥ दिट्ठि + उ इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे भो दिट्ठी ! । दिट्ठी + अ इत्यत्रौगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे भोदिट्ठीओ ! ओगागमाभावेतु भो दिट्ठी ॥

ईकारान्तः स्त्रीलिङ्गः समणीशब्दः ॥

समणी । समणीओ, समणी ॥ समणिं । समणीओ, समणी ॥ समणीए । समणीहिं, समणीहि ॥ समणीए । समणीणं ॥ समणीओ । समणीहिन्तो ॥ समणीए ॥ समणीणं ॥ समणीए । समणीसु ॥

समणीति—समणी + उ इत्यत्र 'आदिवर्णोवर्णेभ्य' इति पूर्वसवर्णदीर्घे समणी । समणी + अ इत्यत्र अदितोरोगा—इत्यादिनौगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीओ, ओगागमाभावे पूर्वसवर्णदीर्घे समणी ॥ समणी + म् इत्यत्रादीदूतां बहुलं भि' इति सूत्रेणेकारस्य ह्रस्वत्वेऽनुस्वारे समणिं । समणी + इ इत्यत्रौगागमे समणी + इओ इति सञ्जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीओ, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे समणी ॥ समणी + इणेत्यत्रेणस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीए । समणी + इहि इत्यत्र ममागमेऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे समणीहि, ममागमाभावे समणीहि ॥ समणी + अए अत्र पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीए । समणी + अण इत्यत्र ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घेऽनुस्वारे समणीणं ॥ समणी + अतोदित्यत्र तकारस्य यकारे लोपे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे च समणीओ । समणी + इहिंतो अत्र पूर्वसवर्णदीर्घे समणीहिंतो ॥ समणी + स्स इत्यत्र स्सस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीए । समणीणं । पूर्ववत् ॥ समणी + मि इत्यत्र मेः 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे समणीए । समणी + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे समणीसु ॥

इदूद्भ्यां ङिङू । ४ । ३ । १२ ॥

ईदूदन्ताभ्यां परस्यामन्त्रणैकवचनस्य ङिङू इत्यादेशौ क्रमेण वा स्तः हे समणि !, हे समणी ! । हे समणीओ !, हे समणी ! ॥

ईदूद्भ्यामिति—आमन्त्रणे, उतः, वा इति पदत्रयमनुवर्तते । ङिश्च ङुश्च ङिङू इति द्वन्द्वः । यथासंख्यमीकारात्परस्य विभक्तेर्ङिः, ऊकारात्परस्य विभक्तेर्ङुर्भवतीत्याह क्रमेणेति । समणी + उ इत्यत्रानेनोकारस्य

'डि' इत्यादेशे डित्वादीकारलोपे हे समणि ! पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे हे समणी ! । हे समणीओ !, हे समणी ! ॥ प्रथमाबहुवचनवत् ॥

उकारान्तः स्त्रीलिङ्गो धेणुशब्दः ।

धेणू । धेणूओ, धेणू ॥ धेणुं । धेणूओ, धेणू ॥ धेणूए । धेणूहिं, धेणूहि ॥ धेणूए ॥ धेणूणं ॥ धेणूओ । धेणूहिन्तो ॥ धेणूए । धेणूणं ॥ धेणूए, धेणूसु ॥ भो धेणु !, धेणू ! । भो धेणूओ ! भो धेणू ! ॥

धेणिर्यति—धेणु + उ इत्यत्र "आदिवर्णोवर्णेभ्य" इति सूत्रेण पूर्वसवर्णदीर्घे धेणू । धेणु + अ इत्यत्रादितोरोगादिदुद्भयः स्त्रियां वा इति सूत्रेणौगागमे धेणु + अ ओ इतिस्थिते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे धेणूओ ! पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे धेणू ॥ धेणु + म् इतिस्थिते ऽनुस्वारे धेणुं । धेणु + इ इत्यत्रौगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे धेणूओ पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे धेणू ॥ धेणु + इण इत्यत्रेणस्समीनामएरितिसूत्रेण विभक्तेरए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे धेणूए । धेणु + इहि इत्यत्र ममागमे ऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे धेणूहिं, ममागमाभावे धेणूहि ॥ धेणु + अए इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे धेणूए । धेणु + अण इत्यत्र ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घे ऽनुस्वारे धेणूणं ॥ धेणु + अतोदित्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे धेणूओ । धेणु + इहिंतो इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे धेणूहिंतो ॥ धेणु + स्स इत्यत्र स्सस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे च धेणूए । धेणूणं ॥ पूर्ववत् ॥ धेणु + मि इत्यत्र मेः 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे धेणूए । धेणु + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे धेणूसु ॥ धेणु + उ इत्यत्रेदूद्भ्यां डिडू' इति सूत्रेण विभक्ते 'डुं' इत्यादेशे डित्त्वादुकारलोपे हे धेणु ! पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे धेणू ! । धेणु + अ इत्यत्रौगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे हे धेणुओ ! पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे हे धेणू ! ॥

ऊकारान्तः स्त्रीलिङ्गो वहूशब्दः ॥

वहू । वहूओ, वहू ॥ वहुं । वहूओ, वहू ॥ वहूए । वहूहिं , वहूहि ॥ वहूए । वहूणं ॥ वहूओ । वहूहिंतो ॥ वहूए । वहूणं ॥ वहूए वहूसु ॥ भो वहु ! भो वहू ! भो वहूओ ! भो वहू ! ॥

वह्विति—वहू + उ इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे वहू । वहू + अ इत्यत्रादितोरोगा—' इत्यादिनौगागमे वहू + अ ओ इ ति जाते पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूओ, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे वहू ॥ वहू + म् इत्यत्र "आदिदूतां वहुलं मि" इति सूत्रेण ह्रस्वेऽनुस्वारे वहुं । वहू + इ अत्रौगागमे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूओ, ओगागमाभावपक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे वहू ॥ वहू + इण अत्रेणस्याए इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूए । वहू + इहि इत्यत्र ममागमेऽनुस्वारे पूर्वसवर्णदीर्घे वहूहिं, ममागमाभावे वहूहि ॥ वहू + अए इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूए । वहु + अण इत्यत्र ममागमे पूर्वसवर्णदीर्घेऽनुस्वारे वहूणं ॥ वहू + अतोदित्यत्र

तकारस्य यकारे लोपे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूओ। वहू + इहिंतो इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे वहूहिंतो ॥ वहू + स्स इत्यत्र स्सस्य 'अए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूए। वहूणं ॥ पूर्ववत् ॥ वहू + मि इत्यत्र विभक्ते 'रए' इत्यादेशे पूर्वसवर्णदीर्घे प्रकृतिभावे वहूए। वहू + इसु इत्यत्र पूर्वसवर्णदीर्घे वहूसु ॥ वहू + उ 'इत्यत्रेदूद्भ्यां डिह्रू' इत्यनेनोकारस्य 'डु' इत्यादेशे डित्त्वादूकारलोपे भोवहु !, पक्षे पूर्वसवर्णदीर्घे भो वहू ! । भो वहूओ !, ॥ भो वहू ! प्रथमाबहुवचनवत् ॥

॥ इति ॥

अथ स्वरान्तनपुंसकलिङ्गाः

क्लीवान्मो वा । ४ । ३ । ३ ॥

नपुंसकात्परस्य प्रथमाया एकवचनस्य मादेशो वा स्यात् ॥ वणं । दहिं । महुं ॥

क्लीबादिति—उत इत्यनुवर्तते। अकार उच्चारणार्थः। क्लीबो नपुंसकस्तदाह नपुंसकादिति। वण + उ इत्यत्रानेनोकारस्य मकारेऽनुस्वारे वणं। दहि + उ इत्यत्रानेन मकारेऽनुस्वारे च दहिं। महु + उ इत्यत्रानेन मकारेऽनुस्वारे महुं ॥ पक्षे पुंवत् ॥

णिती ।४ । ३ । ४४ ॥

क्लीवात्परयोः प्रथमाद्वितीयाबहुवचनयोः प्रत्येकं णि ति इत्येतावादेशौ पर्यायेण स्तः ॥

णितीति—क्लीबात् अदितोः प्रत्येकमिति पदत्रयमनुवर्तते। णिश्च तिश्चेति द्वन्द्वः। वण + अ इत्यत्रानेन सूत्रेणाकारस्य 'णि' इत्यादेशे—वण + णि इति जाते—

णित्योर्नाम्नः । ३ । २ । ३७ ॥

नाम्नः स्वरस्य दीर्घः स्याण्णित्योः परयोः । वणाणि । दहीणि । महूणि ॥

णित्योरिति—दीर्घ इत्यस्यानुवृत्तिः। णिश्च तिश्च णिती तयोर्णित्योः। वण + णि इत्यत्रानेन सूत्रेण णकारोत्तरवर्तिनोऽकारस्य दीर्घे वणाणि। दहि + अ इत्यत्र 'णिती' इति सूत्रेणाकारस्य णयादेशेऽनेनेकारस्य दीर्घे दहीणि। एवं महु + अ इत्यत्र णितीत्यनेनाकारस्य णयादेशेऽनेन सूत्रेणोकारस्य दीर्घे महूणि। एवं सर्वत्र बोध्यम् ॥

तेर्वा । ४ । २ । १६ ॥

आदेशभूतस्य तिशब्दस्य मागमो वा स्यात्। वणाइं, वणाइ। दहीइं, दहीइ। महूइं, महूइ। एवं द्वितीयायामपि ॥

तेरिति—समित्यनुवर्तते । तिशब्दश्चादित्स्थानिक एवान्यस्यासम्भवात् । वण + अ इत्यत्र णितीत्यनेन विभक्तेः 'ति' इत्यादेशेऽकारस्य 'णित्यो' रिति दीर्घे वणा + ति इति जातेऽनेन वैकल्पिके ममागमेऽनुस्वारे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे वणाइं, ममागमाभावे वणाइ । एवं दहीइं, दहीइ । महूइं, महूइ । एवं द्वितीयायामपि । तद्यथा वणं । वणाणि; वणाइं, वणाइ ॥ दहिं । दहीणि, दहीइं, दहीइ ॥ महुं । महूणि, महूइं, महूइ ॥

क्लीवे नित्यम् । ३ । ४ । ६६ ॥

नाम्नः परस्यामन्त्रणार्थकप्रथमैकवचनस्य नित्यं लोपः स्यात् ॥ हे वण ! । हे वणाणि !, वणाइं, वणाइ ॥ हे दहि ! । हे दहीणि !, हे दहीइं !, हे दहीइ ॥ हे महु ! । हे महूणि ! हे महूइं !, हे महूइ ! ॥ शेषं पुंवत् ॥ सव्वं । सव्वाणि, सव्वाइं, सव्वाइ ॥ जं । जाणि, जाइं, जाइ ॥ तं । ताणि, ताइं, ताइ ॥ कं । काणि, काइं, काइ ॥ इमं । इमाणि, इमाइं, इमाइ । एयं । एयाणि, इयाइं, एयाइ ॥ शेषं पुंवत् ॥

क्लीव इति—आमन्त्रणे उतः लोप इति पदत्रयमनुवर्तते । वण + उ इत्यत्रानेनोकारस्य लोपे हे वण ! वणाणीत्यादि तु पूर्ववत् । एवं हे दहीत्यादि बोध्यम् । शेषं पुंवदिति, तत्र वणशब्दस्य रूपाणि जिण शब्दवत् । दहिशब्दस्य रूपाणि मुणिशब्दवत् । एवं सव्वादे रूपाणि यथायथं बोध्यानि ॥

इति नपुंसकलिङ्गाः ॥

संख्यावाचकास्त्रिलिङ्गाः ॥

वेडोण्णी प्रत्येकम् । ४ । ३ । ४३ ॥

दुशब्दात्परयोरादित्प्रत्यययोः प्रत्येकं वे डोण्णि इत्येतावादेशौ वा स्तः ॥ दुवे, दोण्णि ॥

वेडोण्णीति—अदितोरिति दोरिति चानुवर्तते । वेश्च डोण्णिश्च वेडोण्णी । दु + अ इत्यत्रानेनाकारस्य 'वे' इत्यादेशे दुवे, 'डोण्णि' इत्यादेशे तु दोण्णि ॥ एवं द्वितीयाबहुवचनेऽपिबोध्यम् ॥ 'अतोऽयोडवोडौ पुंसि' इत्यादि सूत्राणां त्वत्र न प्रवृत्तिः, विशेषविहितेनानेन बाधात् । न च दुशब्दस्य द्वित्ववाचकत्वेन बहुवचनान्तत्वमयुक्तमिति वाच्यम्, एकातिरिक्तस्यैव बहुत्वेन बहुवचनान्तत्वाद्यतः एवमग्रेऽपि ॥

डोर्दोः । ४ । ३ । ४१ ॥

दुशब्दात्परयोरादित्प्रत्यययो 'र्दो' इत्यादेशः स्यान्नित्यम् । दो ॥

डोरिति—अदितोः नित्यमिति च द्वयमप्यनुवर्तते । नित्यमित्यनुवर्तनाद्बहुलमित्यस्यासम्बन्धः । दु + अ इत्यत्र पूर्वसूत्रस्य वैकल्पिकत्वेनाप्रवृत्तावनेन 'डो' इत्यादेशे डित्त्वादुकारलोपे दो । एवं द्वितीयाबहुवचनेऽपि ॥

ओदिह्यणेहिंतविसुषु दोः ॥ ४ । ३ । २२ ॥

दुशब्दस्यौकारादेशो नित्यं स्यादिहि अण इहिंतो इसु प्रत्ययेषु ॥

ओदिति—नित्यमित्यनुवर्तते । इहिश्च अणश्च इहिंतोश्च इसुश्च इह्यणेहिंतविसवस्तेष्विति विग्रहः ।

इहीहिंतविसूनां द्व्यादिभ्यः स्वरस्य । ४ । १ । १५ ॥

दुप्रभृतिभ्यः संख्यावाचकेभ्यः परेषामेषामादिस्वरस्य लोपः स्यात् । दोहिं, दोहि ॥

इहीहिंतेति—आदेः लोप इति पदद्वयस्यानुवृत्तिः । इहिश्च इहिंतोश्च इसुश्च इहीहिंतविसवस्तेषामित्यर्थः । दु प्रभृतीनां संज्ञाभूतत्वे एतदप्रवृत्त्यर्थमुक्तं संख्यावाचकेभ्य इति । एवमन्यत्रापि बोध्यम् । दु + इहि इत्यत्र 'ओदिह्यणेहिंतविसुषु दोः' इति सूत्रेण दुशब्दसम्बन्धिन उकारस्यौकारेऽनेन विभक्तेरादिस्वरस्येकारस्य लोपे 'इणाणेहीसीसूनामिति' सूत्रेण ममागमेऽनुस्वारे दोहिं, ममागमाभावे दोहि ॥

संख्याया अणस्य ण्हः । ४ । ४ । ५ ॥

संख्यार्थकशब्दात्परस्याणप्रत्ययस्य ण्ह इत्यादेशः स्यात् । दोण्हं ॥ दोहिंतो ॥ दोण्हं ॥ दोसु ॥

संख्याया इति—दु + अण इत्यत्र दोरुकारस्यौकारेऽनेनाणस्य ण्हादेशे "तत्स्थानापन्नस्तद्धर्मं लभते" इति न्यायाद् ण्हादेशस्याणत्वेन ममागमेऽनुस्वारे ॥ दु + इहिंतो इत्यत्रोकारस्यौकारे विभक्तेरादिस्वरस्येकारस्य लोपे दोहिंतो ॥ दोण्हं ॥ पूर्ववत् दु + इसु इत्यत्रोकारस्यौकारे विभक्तेरादिस्वरस्य लोपे दोसु ॥

तेर्णिर्वा । ४ । ३ । ४२ ॥

तिशब्दात्परयोरदित्प्रत्यययोर्णि इत्यादेशो वा स्यात् ॥ तिण्णि ।

तेरिति—अदितोरित्यस्यानुवृत्तिः । ति + अ इत्यत्रानेनाकारस्य 'ण्णि' इत्यादेशे तिण्णि । एवं द्वितीयायामपि ॥

डयोः । ४ । ३ । ४० ॥

तिशब्दात्परयोरदितो 'डयो' इत्यादेशः स्यात् । तओ ॥ तओ ॥ तिहिं, तिहि ॥ तिण्हं ॥ तिहिंतो ॥ तिण्हं ॥ तिसु ॥

डयोरिति—तेः अदितोरितिद्वयोरनुवृत्तिः । ति + अ इत्यत्र 'ण्णि' इत्यादेशाभावेऽनेनाकारस्य 'डयो' इत्यादेशे डित्त्वात्तेरिकारस्य लोपे यकारलोपे प्रकृतिभावे तओ ॥ एवं द्वितीयायामपि ॥ ति + इहि इत्यत्र इणाणेहीसीसूनामिति सूत्रेण विकल्पेन ममागमेऽनुस्वारे तिहिं' ममागमाभावे तिहि ॥ ति + अण इत्यत्र,

'संख्याया अणस्य ण्हः' इत्यनेनाणस्य ण्हादेसे "तत्स्थानापन्नस्तद्धर्मं लभते" इति न्यायेन ण्हादेशस्याणत्वेन ममागमेऽनुस्वारे तिण्हं ॥ ति + इहिंतो इत्यत्र विभक्तेराद्यस्वरस्य लोपे तिहिंतो॥ तिण्हं ॥ पूर्ववत् ॥ ति + इसु इत्यत्र विभक्तेराद्यस्वरस्येकारस्य लोपे तिसु ॥

रोरदितोर्वा । ४ । ३ । ३६ ॥

चतुशब्दात्परयोरदितो 'रो' इत्यादेशो वा स्यात् ॥ चउरो ॥ चउरो ॥

रोरिति—चतोरित्यनुवर्तते । रोः अदितोः वा इतिच्छेदः । चतु + अ इत्यत्रानेनाकारस्य 'रो' इत्यादेशे तकारस्य यत्वे लोपे प्रकृतिभावे चउरो ॥ एवं द्वितीयाविभक्तावपि चतु+इ इत्यत्रेकारस्य 'रो' इत्यादेशे तकारस्य यकारे लोपे प्रकृतिभावे च चउरो ॥

सादितश्चत्तारि चतोर्नित्यम् । ४ । ३ । ४५ ॥

अदिप्रत्ययसहितस्य चउशब्दस्य 'चत्तारि' इत्यादेशो नित्यं स्यात् ॥ चत्तारि ॥ चत्तारि ॥

चउहिं, चउहि ॥ चउण्हं ॥ चउहिन्तो ॥ चउण्हं चउसु ॥

सादित इति—अच्च इच्च अदितौ अदिभ्यां सहितः सादित् तस्येति विग्रहः । चउ+अ इत्यत्र 'रो' इत्यादेशाभावपक्षेऽनेन प्रकृतिप्रत्यययोरुभयोः स्थाने 'चत्तारि' इत्यादेशे चत्तारि ॥ एवं द्वितीयायामपि ॥ चउ + इहि इत्यत्र ममागमेऽनुस्वारे विभक्तेरादेः स्वरस्य लोपे चउहिं । ममागमाभावे चउहि ॥ चउ + अण इत्यत्र ण्हादेशे ममागमेऽनुस्वारे चउण्हं ॥ चउ + इहिंतो इत्यत्र विभक्तेरादेः स्वरस्य लोपे चउहिंतो ॥ चउण्हं ॥ पूर्ववत् ॥ चउ + इसु इत्यत्र विभक्तेरादेःस्वरस्य लोपे चउसु ॥

अदितोः पञ्चादिभ्यः । ३ । ४ । ४२ ॥

संख्यावाचकेभ्यः पञ्चादिभ्यः परयोरदितोर्लोपः स्यात् ॥ पञ्च ॥ पञ्च ॥ पचहिं, पंचहि ॥ पचण्हं ॥ पंचहिन्तो ॥ पंचण्हं ॥ पंचसु ॥ एवं छ शब्दादारभ्याट्ठारसपर्यन्तं बोध्यम् ॥

अदितोरिति—लोप इत्यनुवर्तते ॥ पञ्च + अ इत्यत्रानेन विभक्तेर्लोपे पञ्च ॥ एवं द्वितीयायामपि पञ्च + इहि इत्यत्र ममागमेऽनुस्वारे विभक्तेरादिस्वरस्य लोपे पञ्चहिं, ममागमाभावे पञ्चहि ॥ पञ्च + अण इत्यत्र ण्हादेशे ममागमेऽनुस्वारे पंचण्हं ॥ पञ्च + इहिंतो इत्यत्र विभक्तेरादेः स्वरस्य लोपे पञ्चहिन्तो ॥ पञ्चण्हं ॥ पूर्ववत् ॥ पंच + इसु इत्यत्र विभक्ते रादिस्वरस्य लोपे पंचसु ॥ एवं । वीसादौ विशेषकार्यस्य वक्ष्यमाणत्वेनाट्ठारसपर्यन्तमित्युक्तम् ॥

संख्या तेः । ३ । ४ । ४४ ॥

संख्यार्थकतिप्रत्ययान्तात्परयोरादितोर्लोपःस्यात् ॥ कति । जति । तति । वीसाद्याः शब्दाः संख्यासंख्येयोभयवाचकाः, तत्र संख्येयवाचकत्वे नित्यमेकवचनान्ताः, संख्यावाचकत्वे तूभयवचनान्ताः ॥

संख्येति—अदितोर्लोप इत्यनुवर्तते । संख्यायां वर्तमानादित्यर्थः । प्रत्ययाप्रत्यययोरिति परिभाषया ति प्रत्ययान्तादिति लाभः । कति + अ इत्यत्रानेन विभक्तेर्लोपे कति शेषं तिशब्दवत् ॥ एवं द्वितीयायामपि बोध्यम् । एवं जतिततिशब्दावपि । वीसादिशब्दानां संख्यासंख्येयवाचकत्वेऽपि संख्याविशिष्टवाचकत्वे नित्यमेकवचनान्तता । संख्यापरत्वे तु बहुवचनान्ततापि ॥

वीसादिभ्यः ।४।३।१४॥

नउइशब्दपर्यन्तानां वीसादिशब्दानां प्रथमायां नपुंसकवद्रूपं स्यान्नित्यम् ।

वीसं । चत्तालीसं । तृतीयादौ तु वीसाए । चत्तालिसाए इत्यादि ॥

वीसादिभ्य इति—उत इति डमिति तद्द्वयस्यानुवृत्तिः । वीसाशब्दादारभ्य नउइशब्दपर्यन्तान नित्यस्त्रीलिङ्गानां प्रथमायां नपुंसकरूपातिदेशोऽनेन क्रियते सतादीनां तु सर्वविभक्तौ पुंनपुंसकत्वमिति तत्रातिदेशापेक्षा नास्ति ॥ द्वितीयायां नपुंसकत्वविधानं व्यर्थं, मप्रत्यये परे स्वत एव ह्रस्वसिद्धेरतः 'प्रथमाया' मित्येवोक्तं ॥ वीसाशब्दात्पूर्वेषामपि संख्यावाचकानां त्रिलिङ्गत्वम् ॥ नउइशब्दोपादानेन नवनउइपर्यन्तस्य ग्रहणं नवनउइशब्देऽपि नउइशब्दस्य विद्यमानत्वात् ॥ वीसा + अ इत्यत्रानेनाकारस्य डमादेशे डित्वादाकारलोपेऽनुस्वारे वीसं ॥

॥ इति ॥

अथाव्ययप्रकरणम् ॥

सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु ॥
वचनेषु च सर्वेषु यन्न व्येति तदव्ययम् ॥ १ ॥

सदृशमिति—त्रिषु लिङ्गेषु सदृशं = समानमेकप्रकारमिति यावत्, सर्वासु च विभक्तिषु समानं सर्वेषु वचनेषु च समानमत एव यन्न व्येति विविधप्रकारं प्राप्नोति तदव्ययम् ॥ १ ॥

अव्ययसहादि । १ । १ । ३५ ॥

अहादिगणपठितमव्ययसंज्ञकं स्यात् ॥

अह । अ । अण । अइरा । अइव । अईव । अंग । अंतर । अंतरेण । अंते । अंतो । अकम्हा । अचिरं । अजस्सं । अज्ज । अज्जयाए । अज्जसुए । अणिसं । अति । अत्थि । अदु । अदुत्तरं । अदुवा । अधो । अभि । अभिक्खं । अभिक्खणं । अलं । अलमंथु । अवि । अविअ । अविआइं । असइं । असतिं । अहवणं । अहावरं । अहे । अहो । आ । आइं । आउ । आए । आविर् । इइं । इइ । इति । इत्ति । इय । इव । ईसं । ईसि । ईसिं । उ । उण । उणो । उदाउ । उदाइं । उपरि । उप्पिं । उवरि । उस्सएणं । उस्सन्नं । ए । एम । एमाइ । एमेव । एयावंति । एव । एवं । एवएहं । किं । किच्च । किणाइं । किएणं । किर । किल । कीस । कद् । कु । खलु । खिप्पं । च । चण । चणं । चि । चिट्ठं । चिय । चे । [illegible] । जइ । जति । जदि । जा । जाउ । जाव । जावं । जावत् । जुगवं । झत्ति । ण । णं । णवरं । णवरि । णहु । णाइ । णाणा । णिहो । णु । णूणं । णो । णणं । णहं । तं । ता । ताव । तावं । तावत् । ति । त्ति । तु । थ । दिया । दुट्ठु । दूरा । धणियं । धिद्धि । धिर । धिसि । न । नणु । नमो । नवरं । नवरि । नहु । नाणा । नूणं । नो । नोणं । पए । पगे । पच्छा । पभिइ । पभित्ति । परेव्वं । पसढं । पाउ । पाउर् । पाए । पाओ । पातो । पायं । पि । पिव । पिहं । पिहु । पिहो । पुढो । पुण । पुणो । पुरच्छा । पुरत्था । पुरा । पुरे । पुला । बहि । बहिं । बहिया । भंते । भिसं । भुज्जो । भूज्जो । भे । भो । मज्झे । मणयं । मणा । माहं । मिव । मिदो । मुसा । मुहा । मुहु । य । युगवं । रह । रहो । राओ । रिते । वि । विव । विसं । विसु । व्व । सइं । सद् । संपइ । संपयं । संपाओ । सक्खं । सणिअं । सद्धिं । समं । समंतं । समंता । सयं । सययं । सयराहं । सायं । सुइरं । सुए । सुदट्ठु । सुतरं । सेवं । हंता । हंद । हंदि । हंभो । हउं । हणि हणि । हद्धी । हव्वं । हिज्जो । हीं । हुरत्था । हुलियं । हे । हेट्ठ । हेट्ठा । हेट्ठि । हेट्ठिल्ल । हेहो ।

अव्ययाभिधि—अहशब्द आदिर्यस्य तदहादि इति तद्गुणसंविज्ञानो बहुव्रीहिः। स्वान्वयिनि स्व विशेषणस्याप्यन्वयेऽयं समासः। यथा लम्बकर्णं पुरुषमानयेत्यादौ। पुरुषान्वयिन्यानयने लम्बकर्णस्यापि सम्बन्धात्तद्गुणसंविज्ञानस्तद्भिन्नोऽतद्गुणसंविज्ञानो यथा दृष्टसागरं पुरुषमानयेत्यादौ, अत्र हि पुरुषान्वयिन्यानयने सागरस्य नान्वयः। तथा प्रकृतेऽपि स्वान्वयिसंज्ञायामहशब्दस्यापि सम्बन्धात्तद्गुणसंविज्ञान एव ॥ न व्येति लिङ्गसंख्याकारकप्रयुक्तविकारान्न प्राप्नोति यत् तदव्ययम्। अत एव 'सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु, इति श्रुतिरपि सङ्गता। अहशब्दस्यान्यार्थे नीयमानकलशादिवत् स्वतो मङ्गलत्वेन तमेव शब्दमाद्यवयवीकृत्य गणो निर्दिष्टः। अत एव विपरीतशंकालेशोऽपि न। अहादिगणस्तु मूल एव निर्दिष्टः। तत्र क्रमेणार्था उच्यन्ते। अह आनन्तर्यादौ। अ अण निषेधे। अइरा तत्काले। अइव अईव अधिके। अंग आमन्त्रणे। अन्तर अन्तरेण अभाववति। अंते अंतो मध्यदेशे। अकम्हा दैवादित्यर्थे। अचिरं शीघ्रतायाम्। अजस्सं निरन्तरे। अज्ज अस्मिन्नहनि। अज्जयाए अद्यप्रभृत्यर्थे। अज्जसुए अद्यश्च इत्यर्थे। अणिसं सतते। अति अतिशये। अत्थि अस्तीति तिङन्तप्रतिरूपकमव्ययम्। अदु अदुत्तरं आनन्तर्यादौ। अदुवा पक्षान्तरे। अधो नीचैरित्यर्थे। अभि आभिमुख्ये। अभिक्खणं अभिक्खं पौनःपुन्ये। अलं पर्याप्त्यादौ। अलमंथु अलमस्त्वित्यर्थे। अवि समुच्चयादौ। अविअ पक्षान्तरे। अवियाइं सम्भावनायाम्। असइं असतिं पौनःपुन्ये। अहवणं अथवार्थे। अहावरं अहे ततः परमित्यर्थे। अहो नीचदेशे। आ मर्यादाभिविध्यादौ। आइं वाक्यालंकारे। आउ पक्षान्तरे। आए समीपे। आविर् प्रकटीभावे। इ इं प्राकट्ये। इइ इति इत्ति इय प्रकारे। इव सादृश्ये। ईसं ईसि ईसिं अल्पत्वे। उ, उण उणो पुनरित्यर्थे। उदाहु उदाइं

पक्षान्तरे। उपरि उप्पिं उवरि उपर्यर्थे। उस्सरणं उस्सन्नं प्रायोऽर्थे। उपरि पूर्वप्रकारे। ए सम्बोधने एतत्-प्रकारे च। एम एमाइ इत्यादौ। एमेव एतत्प्रकारे। एयावंति-इयत्तायाम्। एव अवधारणे। एवं पूर्वोक्तरीतौ। एहं वाक्यालङ्कारे। किं जिज्ञासायां। किंच पक्षान्तरे। किणाइ किञ्चिन्मात्रमित्यर्थे। किणणं जिज्ञासायाम्। केर किल निश्चये। कीस कस्मादित्यर्थे। कद्, कु कुत्सायाम्। खलु निश्चये वाक्यालङ्कारे च। खिप्पं शीघ्रतायाम्। च, ब, समुच्चयादौ। चण, चणं, चि, चे, चेदित्यर्थे। चिट्ठं भृशमित्यर्थे। चिय चैवार्थे। जइ, जति, जदि, यद्यर्थे। जाउ कदाचिदित्यर्थे। जा, जाव, जावं, जावत् यावदित्यर्थे। जुगवं एकस्मिन्काले। झत्ति शीघ्रतायाम्। ण निषेधे। णं वाक्यालङ्कारे। णवरं, णवरि कैवल्यार्थे। णहु णाइ निषेधे। णाणा अनेकस्मिन्। णिहो नीचदेशे। णु प्रश्ने। णूणं निश्चये। णो निषेधे। णणं णहं वाक्यालङ्कारे। तं तत्रेत्यर्थे। ता, ताव, तावं, तावत् तावदित्यर्थे। ति त्ति पूर्वोक्तप्रकारे समाप्तौ च। तु समुच्चये। थ वाक्यालङ्कारे। दिया दिवसे। दुट्ठु असम्यगर्थे। दूरा दूरदेशे। धणियं अतिशये। धिद्धि, धिर, धिसि, धिक्कारार्थे। न निषेधे। णणु शङ्कायाम्। नमो नमस्कारे। नवरं नवरि कैवल्यार्थे। नहु निषेधे। नाणा अनेकस्मिन्। नूणं निश्चये। नो, नोणं, निषेधे। पए, पगे, प्रभाते। पच्छा उत्तरत्र। पभिय, पभित्ति प्रारभ्येत्यर्थे। परेव्वं परदिने। पसढं प्रसह्येत्यर्थे। पाउ, पाउर् प्रादुर्भावे। पाए प्रायोऽर्थे। पाओ, पातो प्रभाते, पायं प्रायोऽर्थे प्रभाते च। पि अप्यर्थे। पिव इवार्थे। पिहं, पिहु, पिहो, पुढो, पृथगर्थे। पुण, पुणो पुनरित्यर्थे। पुरच्छा, पुरत्था, पुरे अग्रे इत्यर्थे। पुरा, पुला पूर्वकाले अग्रेच। वहि, बहिं, वहिया, वाहे। भंते पूज्यसम्बोधने। भिसं अतिशये। भुज्जो भूज्जो वाहुल्ये। भे, भो सम्बोधने। मज्झे मध्ये। मणयं, मणा अल्पे। माइं निषेधे। मिव इवार्थे। मिथो परस्परस्मिन्। मुसा असत्ये। मुहा निष्प्रयोजने। मुहु पौनःपुन्ये। य चार्थे। युगवं एककाले। रह रहो एकान्ते। राओ रात्रावित्यर्थे। रिते विनार्थे। वि अप्यर्थे। विव इवार्थे। विसं वीसु पृथक्त्वे। व्व इवार्थे। सइं सकृदर्थे सदार्थे च। संपइ, संपयं एतत्काले। संपाओ प्रभाते। सक्खं प्रत्यक्षज्ञाने। सणिअं शनैरित्यर्थे। सद्धिं समं सहार्थे। समंतं समंता सर्वप्रकारेणेत्यर्थे। सयं सकृदित्यर्थे स्वयमित्यर्थे वा। सययं सतते। सयराहं सत्वरमित्यर्थे। सायं सूर्यास्तमनसमये। सुइरं दीर्घकाले। सुए अनागतदिने। सुट्ठु सौष्ठवे सुतरं सहजत इत्यर्थे। सेवं तदेवमित्यर्थे। हंता स्वीकारे। हंद आश्चर्यार्थे। हंदि, हंभो आमन्त्रणे, क्रुद्धसम्बोधने विकल्पविषादपश्चात्तापनिश्चयेषु च।। हउं हा इत्यर्थे। हणि हणिं प्रतिदिनम्। हद्धी खेदे। हव्वं शीघ्रतायाम्। हिज्जो अतीतदिवसे। ही आश्चर्ये। हुरत्था वहिर्देशे। हुलियं शीघ्रतायाम्। हे सम्बोधने। हु, हेट्ठा, हेट्ठि, हेट्ठिल्ला नीचदेशे। हे, हो, आमन्त्रणे॥

अत्यादय उपसर्गाश्च। १। १। ३८॥

अत्यादय उपसर्गसंज्ञा अव्ययसंज्ञाश्चस्युः।

,अति, अइ, अणु, अनु, अधि, अहि, अभि, अव, उव, आ, ओ, उइ, उप, उव, णि, नि, णि, निर्, दुर्, प, प्प, पडि, पति, परा, परि, पलि, विप्पम् एतेऽत्यादयः।

अत्यादय इति—चकारोऽत्राव्ययसंज्ञासमानेशार्थः। तेनोभयसंज्ञा भवत्येषामत्र आद्य ३ तत्रोपसर्गसंज्ञा क्रियायोगेऽव्ययसंज्ञातु क्रियायोगं विनापीति विशेषः। अणु, अनु, पश्चात्सादृश्यसमीपलक्षणाद्यर्थेषु। अति, अइ उत्कर्षातिशय... अभि आभिमुख्यादौ। अव उव निश्चयावगत्यनादरालम्बनादिषु। आ सम्यगादौ। ओ अववत्। ... ऊर्ध्वादौ। उप, उव समीपादौ। ओव उववत्। ओ शब्दस्यापि समीपादौ वृत्तिः, णि,नि निषेधादौ। णिर्... अभावे निश्चयादौ। दुर् पीडादौ। पप्प प्रकर्षादौ। पडि, पति, व्यातिलक्षणादौ। परा प्राबल्यादौ। परि, प... सर्वत्रादौ। वि, वियोगादौ॥

सोप्रभृतितद्धिताः। १। १। ३५॥

सोप्रभृतितद्धितप्रत्ययान्ताः शब्दा अव्ययसंज्ञाः स्युः। कमसो इत्यादयः॥

सो प्रभृतीति—अव्ययमित्यनुवर्तते। प्रभृतीति कथनेन स्स सिं हं इ हा हिं अम् आ आवन्ति इ इण इणण इह ई ए क्खुत्तो चर्ण चि विय एहं सिंह एहु वा ति तो त्थ त्थं दा दाणि धा या सि हियं हुं इत्यादि तद्धितप्रत्ययान्तानामपि अव्ययसंज्ञा भवति। अत्र प्रत्ययग्रहणपरिभाषया तदन्तविधिः यद्यपि संज्ञा विधौ अन्यत्र प्रत्ययग्रहणे तदन्तविधिर्न तथापि प्रयोजनं सर्वनामाव्ययसंज्ञायामिति वचनात्तदन्तविधिः। केवलयोः कृत्तद्धितयोः संज्ञाया निष्फलत्वात्। अत एवोक्तप्रत्ययान्तेभ्यः शब्देभ्यः परस्य सुपः "अव्ययात्सुपः" इति वक्ष्यमाणसूत्रेण लोपो भवति। कमसो क्रमश इत्यर्थे। सोप्रत्ययान्तोऽयं शब्दः। एवं बहुसो, पा दवदवस्स, एकस्सि इत्यादयः॥

हेत्वर्थादि कृतः। १। १। ३६॥

हेत्वर्थादिकृत्प्रत्ययान्ताः शब्दा अव्ययसंज्ञकाः स्युः॥ गच्छित्तए। गच्छित्ता। अभिगन्तु गणिउं। घेत्तुं। गहिउं। पग्गहितु। नेऊणं। भंजिऊणं। गमेऊणं। पडिविसज्जिय। उस्सक्किया किच्च। किच्चा। कट्टु। उवागम्म। पकत्थ॥

हेत्वर्थेति—अव्ययमित्यनुवर्तते। हेतुरर्थो येषां ते हेत्वर्थास्त आदयो येषां ते हेत्वर्थादयः। ते च कृतश्चे विग्रहः। उदाहरणन्तु क्रमेण मूल एव स्पष्टम्। अत्रापि पूर्ववत्तदन्तविधिः।

अव्ययीभावश्च। १। १। ३७॥

अव्ययीभावोऽव्ययसंज्ञः स्यात्।

अव्ययीभावइति—अव्ययमित्यनुवर्तते। उदाहरणंच मूल एव तत्प्रकरणे प्रदर्शयिष्ये॥

❀ इत्यव्यय प्रकरणम् ❀